किसान विरोधी कानून

प्रश्नोत्तर पुस्तिका

अमर हबीब

अनुवाद
प्रा. ए.बी. पाटील

परिसर प्रकाशन
आंबाजोगाई- ४३१५१७
महाराष्ट्र

बीस रूपये

शीर्षक : किसान विरोधी कानून - भाषा- हिन्दी
लेखक- अमर हबीब, आंबाजोगाई, मो. ८४११९०९९०९
हिन्दी भाषांतर सहयोग- प्रा. ए. बी. पाटील, जलगांव, मो. ९४२२७७६२९०
शब्द- किसान विरोधी कानून, संविधान, कृषीजमीन अधिकतम सीमा निर्धारण, आवश्यक वस्तू, भूमि संपादन, कानून, किसान, किसानपुत्र आंदोलन.
प्रकाशक- परिसर प्रकाशन, अंबर, हाऊसिंग सोसायटी, आंबाजोगाई-४३१५१७ (महाराष्ट्र)
मुद्रक- आर्टी ऑफसेट प्रिंटर्स, एमआयडीसी, लातूर
प्रकाशन दिनांक- १८ जून २०१८ - मूल्य- बीस रुपये

Title- Kisaan Virodhi Kanoon- (anti-farmer laws)
Language- Hindi
Author- Amar Habib, AMBAJOGAI-431517 Mb. 8411909909
Hindi Tranalation- Prof A. B. Patil (Jalgaon) Mb 9422776290
Key words- anti-farmer laws, constitution Land ceilling, Essential Commodities, Land Aquisition, Act, Peasants, Kisanputra Andolan,
Publisher- Parisar Prakashan, Amber, Housing Society, AMBAJOGAI-431517 (Maharashtra)
Printer- Arty Offset Printers, MIDC, LATUR
Date of Publication- 18th June 2018,- Price- Rs. Twenty only

आप के प्रश्न

१) किसानों की आत्महत्या का मुख्य कारण क्या है?

२) लोककल्याण के लिए कानून बनाये जाते हैं फिर किसान विरोधी कानून कैसे?

३) संविधान का 'परिशिष्ट- ९' यह क्या मामला है?

४) कौनसे संविधान संशोधन किसान विरोधी हैं?

५) कौन से कानून किसान विरोधी हैं?

६) सिलिंग कानून को विरोध क्यों?

७) सिलिंग कानून का स्वरुप क्या है?

८) सिलिंग का कानून पक्षपाती कैसे?

९) जमिनदारी खत्म करना सिलिंग कानून का उद्देश्य नहीं था क्या?

१०) सिलिंग कानून बनाने के पीछे क्या हेतु होगा?

११) भूमिहीनों को जमीन देने पर विरोध है क्यों?

१२) सिलिंग कानून खत्म किया तो पूँजीपति छोटे किसानों की जमीनें खरीद कर उन्हें भूमिहीन बना देंगे, उसका क्या?

१३) सिलिंग कानून खारिज करने पर किसानों को क्या लाभ?

१४) किसानों को खेती करना छोड देना चाहिए क्या?

१५) लोग खेती छोड कर बाहर निकलते गये तो किसानी कौन करेगा?

१६) सरकार को सिलिंग कानून खारिज करना राजकीय दृष्टि से नुकसानकारक होता हो तो मध्यम मार्ग कौनसा?

१७) संसार के अन्य देशों में भूमिधारण की परिस्थिती कैसी है?

१८) क्या उत्तराधिकार कानून में कुछ बदलाव होना चाहिए?

१९) अत्यावश्यक वस्तु कानून की पार्श्वभूमि क्या है?

२०) अत्यावश्यक वस्तु कानून में किन वस्तुओं का समावेश किया गया है?

२१) अत्यावश्यक वस्तु कानून से खेती उत्पादनों को हटाया तो?

२२) अत्यावश्यक वस्तु कानून का किसानों पर क्या परिणाम हुआ?

२३) आवश्यक वस्तु कानून के अन्य दुष्परिणाम क्या हैं?

२४) इस प्रकार के कानून संसार के किसी देश में हैं क्या?

२५) स्वामिनाथन आयोग की सिफारिशों को लागू करने पर क्या किसानों की समस्याएँ खत्म हो जायेंगी?

२६) भूमि अधिग्रहण कानून की पार्श्वभूमी क्या है?

२७) युपीए और एनडीए सरकारों ने भूमि अधिग्रहण कानून में किये हुए संशोधन, किसानों के पक्ष में हैं क्या?

२८) भूमि अधिग्रहण कानून पर क्या आक्षेप और सूचनाएँ है?

२९) भारत का संविधान बदलना चाहिए क्या?

३०) किसान विरोधी कानूनों के लिए निश्चित कौन जिम्मेदार है?

३१) किसान विरोधी कानूनों के विरोध में न्यायालय में क्यों नहीं जाते?

३२) ये कानून खारिज करने के लिए किसानपुत्र आंदोलन की क्या भूमिका है?

३३) किसानपुत्र ही क्यों?

३४) किसानपुत्र आंदोलनने आज तक क्या किया?

३५) किसानपुत्र आंदोलन में सहभागी होने के लिए क्या करना पडेगा?

किसानों की स्वतंत्रता से संबंधित यदी अन्य कोई प्रश्न हो तो आप 8411909909 पर लेखक को पूछ सकते हैं ...

हमारे उत्तर

किसान विरोधी कानून

(१) किसानों की आत्महत्या के प्रमुख कारण क्या है?

आत्महत्या कहना गलत है। यह सारे किसान, सरकारी नीतियों के बलि हैं। यह आत्महत्या नहीं है बल्कि खून हैं और उसे सीधे सरकार जिम्मेदार है। सभी दलों की सरकारें जिम्मेदार हैं। किसान विरोधी कानूनों की श्रृंखलाओं में जकडे जाने के कारण उन्होंने मृत्यु को स्वीकार किया है। इस वास्तविकता को समझने पर ही किसानों की आत्महत्याओं का मसला सुलझ सकता है।

सन १९८६ में यवतमाल जिले के चील-गव्हाण गांव के साहेबराव करपे नामक किसान ने पवनार आश्रम के निकट दत्तपूर जाकर पूरे परिवार के साथ आत्महत्या की थी। मरते समय उन्होंने एक चिठ्ठी लिखी थी, जिससे किसानों की समस्याओं का भीषण यथार्थ संसार के सामने आया। १९ मार्च १९८६ को हुई यह पहली दहेला देनेवाली आत्महत्या थी।

सरकारने स्वयं निर्णय नहीं किया था बल्कि न्यायालयने आदेश देने के बाद सरकारने टाटा इन्स्टिट्यूट ऑफ सोशल सायन्सेस, मुंबई इस संस्था को किसानों की आत्महत्या पर रिपोर्ट देने को कहा था। केंद्र सरकार के नॅशनल क्राईम रेकॉर्ड ब्युरो ने किसानों की आत्महत्या को अलग से दर्ज करना शुरु किया। कुछ लोगों का यह मानना है कि, उदारीकरण तथा भूमंडलीकरण के कारण किसान आत्महत्या करने लगे हैं। लेकिन यह सरासर गलत है। क्योंकि यह नीति अपनाने के पहले भी किसान आत्महत्या कर रहे थे। इसके अनेक प्रमाण उपलब्ध हैं। अंग्रेजों के जमाने में भी किसानों की आत्महत्याएँ होती थी। अंग्रेज जाने के बाद भी बारबार होती आयीं हैं। यह सच है कि १९९० के बाद किसानों की आत्महत्याएँ बढी हैं। उस का कारण ठीक से समझना होगा।

वर्ष १९९० में केंद्र सरकारने उदारीकरण तथा भूमंडलीकरण की नीति का स्वीकार किया। उसे संपूर्ण देश में लागू किया। फिर भी देश के अनेक राज्यों में किसानों की आत्महत्याएँ होते हुए नहीं दिखती। तुलनात्मकरीत्या अधिक विकसित राज्यों में बडे पैमाने पर आत्महत्याएँ हो रही हैं। इसका अर्थ यह है कि, जहाँ आसपास विकास हुआ, उस विकास के तनाव का बोझ झेलने की क्षमता किसानों में नहीं आ सकी। (सच तो यह है कि आने नहीं दी गई) उस परिसर के किसान बडे पैमाने पर हताश हुए और उन्होंने आत्महत्या का मार्ग स्वीकार किया। 'इंडिया' में उदारीकरण आया लेकिन

'भारत' में आया ही नहीं। 'भारत' पर 'इंडिया' के विकास का बोझ पडता गया। वह सहन न होने के कारण किसानों को आत्महत्या करनी पडी।

अनेक लोग किसानों की आत्महत्याओं के संदर्भ में 'निमित्त' और 'कारण' में गलती करते हैं। 'निमित्त' कुछ भी हो सकता है, 'कारण' उसके पीछे होता है। कारण समझना चाहिये। कारण समझने के लिए पूर्व परिस्थिति का विचार किया तो इसके मूल में किसान विरोधी कानून हैं, यह पता चलता है। 'इंडिया' में उदारीकरण हुआ। (वहाँ भी पूरी तरह से नहीं हुआ है। आज भी अनेक क्षेत्रों में परमीट-कोटा राज जारी है।) 'भारत' में अर्थात कृषिक्षेत्र में उदारीकरण बिल्कुल नहीं आने दिया गया। निम्न लिखित कानून इस बात के प्रमाण हैं कि भारत में उदारीकरण बिल्कुल नही आने दिया गया। (१) अधिकतम खेतजमीन धारणा कानून (ॲग्रीकल्चरल लँड सिलिंग ॲक्ट) (२) आवश्यक वस्तु कानून (इसेंशियल कमोडिटीज ॲक्ट), (३) भूमि अधिग्रहण कानून (लँड ॲक्विझिशन ॲक्ट) यह तीनों कानून आर्थिक उदारीकरण के तत्वों के विरुद्ध हैं. वह ९० से पहेले जैसे थे वैसेही बाद में बने रहे. आज तक कायम हैं. यह कानूनही किसानों की आत्महत्या की जड हैं.

इस के साथ यह भी जान लेना आवश्यक है की, जिनकी आजिविका मात्र खेती पर निर्भर है ऐसे अल्पभूधारक किसान ही सलीब पर चढ रहे हैं। खेती के इतने छोटे टुकडे हो गये हैं कि किसान उन पर अपने परिवार का बसर नही कर सकता। उदारीकरण के कारण आत्महत्या नही हो रही हैं बल्कि उदारीकरण नही होने के कारण किसानों को आत्महत्या करनी पड रही है।

(२) लोककल्याण के लिए कानून बनाये जाते हैं, फिर किसान विरोधी कानून कैसे?

सरकार माँ-बाप होती है, यह जिस प्रकार की अंधश्रद्धा है वैसे ही कानून कल्याण के लिए बनाये जाते हैं, यह भी अंधश्रद्धा ही है। कानून बनाते समय यह जरूरी नही की लोककल्याण का उद्देश्य रहे, कई बार चुनाव में मिलने वाले वोट देखे जाते हैं, कई बार किसी के हिसंबंधों को देखा जाता है, कभी-कभार लोक कल्याण।

उपर बताये गये कानून किसान विरोधी ही हैं। वे समझ-बुझ कर तैयार किये गये हैं। कानून किसान विरोधी कैसे? यह समझने के लिए प्रथम सिलिंग ॲक्ट पर विचार करते है। सिलिंग कानून क्या है? कृषिभूमि की मालकीयत पर लादी गई मर्यादाओं का कानून है। 'जमीन' की मालकीयत की मर्यादा नहीं, केवल कृषिभूमि के लिए ही मात्र यह कानून है। जमीन और कृषि-भूमि का फर्क समझिए। खेती की मालकीयत पर मर्यादा लादी गई। कारखानदारों पर ऐसी कोई मर्यादा नहीं है। वह

जितनी चाहे जमीन खरीद सकते हैं। यह कानून राज्यों का है। महाराष्ट्र में बिना एक फसल की जिरायत जमीन ५४ एकड तथा दो फसलवाली जमीन की मर्यादा १८ एकड निश्चित की गई है। इससे एक बिस्वा भी ज्यादा हो तो उस पर सरकार का अधिकार बन जाता है। इस प्रकार के कोई निर्बंध अन्य व्यावसायिकों पर नहीं है। वकील, डॉक्टर, दुकानदार, कारखानदार सभी अपने व्यवसाय मुक्त रुप से कर सकते हैं। केवल किसान नहीं कर सकता।

सिलिंग का कानून लागू होने के बाद लोग कोर्ट में गये थे। यह कानून भारत के मूल संविधान से विसंगत है, इस अभिप्राय के साथ कोर्ट ने इस कानून को खारिज किया था। फिर क्या? सरकार ने नई युक्ति खोजी। संविधान के ९ वे परिशिष्ट में जोड दिया। और किसानों के लिए न्यायालय के दरवाजे बंद कर डाले। किसान संबंधी अनेक कानूनों के बारे में हम निश्चियपूर्वक कह सकते हैं कि, वे किसान विरोधी हैं तथा वे समझ-बुझकर बनाये गये हैं।

(३) संविधान का 'परिशिष्ट ९' यह क्या मामला है?

१९४७ के पूर्व भारत में अंतरिम सरकार थी। स्वातंत्रता के बाद कुछ समय तक वही संसद बनी रही। १९५२ में पहला सार्वत्रिक चुनाव हुआ। अंतरिम सरकार के द्वारा संविधान समिति का गठन किया गया था। अंतरिम सरकार के सभी सांसद संविधान सभा के सदस्य थे। प्रारुप समिति के अध्यक्ष डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर थे। संविधान सभा में विस्तार से चर्चाएँ हुई। भारत का संविधान २६ जनवरी १९५० से लागू हुआ। संविधान में कुल आठ परिशिष्ट (अनुसूची) थे। परिशिष्ट याने, ऐसे विवरण जिन का उल्लेख मूल संविधान के अनुच्छेद में हुआ हो लेकिन उसका खुलासा वहाँ नहीं किया है, उस खुलासे के लिए परिशिष्ट जोडे गये। उदाहरणार्थ, संविधान के अनुच्छेद १ की पहली पंक्ति में लिखा है कि, 'संघराज्य का नाम व राज्यक्षेत्र - इंडिया अर्थात भारत, राज्यों का संघ होगा'। दूसरी पंक्ति में (राज्य तथा उनके राज्यक्षेत्र, पहिली अनुसूची में जिस प्रकार उल्लेख है वैसे होंगे।) याने अनुच्छेद १ का विवरण परिशिष्ट १ में दिया है।

मूल संविधान में आठ परिशिष्ट थे। इन आठों परिशिष्टों का संविधान में पहले उल्लेख हुआ है। लेकिन परिशिष्ट ९ का उल्लेख मूल संविधान में कही भी नहीं था। ९ वां परिशिष्ट जोडने के लिए १८ जून १९५१ को पहिला संविधान संशोधन किया गया। इस परिशिष्ट में जिन कानूनों का समावेश होगा वे कानून न्यायालय के अधिकार के बाहर होंगे, इस प्रकार परिशिष्ट का स्वरुप है। तारीखों से ध्यान में आता है कि संविधान लागू होकर मात्र देढ ही वर्ष हुआ था, तब अस्थायी सरकार थी। मतलब

सार्वजनिक चुनाव द्वारा चुनी हुई सरकार स्थापन होने के केवल पांच या छ महिने पूर्व ९ वां परिशिष्ट हमारे संविधान में जोड दिया गया। अस्थायी सरकार को नीति से संबंधित इतना बडा निर्णय लेना चाहिए था क्या? इतनी जल्दी करने की क्या आवश्यकता थी? क्या आनेवाले चुनाव के लिये वह जरूरी था?

प्रजातांत्रिक देश में न्याय के लिए न्यायालय में जाने का अधिकार मूलभूत अधिकार माना जाता है। लेकिन भारत में आजादी का अभी सबेरा ही हो रहा था कि किसानों का न्यायालय में न्याय माँगने का अधिकार खारिज कर टिया गया। सत्तर वर्ष होने आये लेकिन अब तक सूरज निकला ही नहीं।

आज तक (२०१८) परिशिष्ट ९ में २८४ कानून हैं। उनमें से २५० से ज्यादा कानून किसानों से संबंधित है। शेष कानूनों का भी खेती से अप्रत्यक्ष संबंध है। २८४ में से २५० कानून इस परिशिष्ट में गलती से जोडे गये, ऐसा तो नही कहा जा सकता। किसानों को न्यायालयों से दूर रखने का उद्देश्य स्पष्ट दिखाई देता है।

हाल में सर्वोच्च न्यायालयनें कहा है कि २४ अप्रैल १९७३ (केशवानंद भारती केस) के बाद परिशिष्ट ९ में जोडे गये कानून न्यायालय की कक्षा में आ सकते है। लेकिन सिलिंग तथा अन्य महत्वपूर्ण कानून उसके पूर्व के हैं।

किसानों पर अन्याय करने की शुरुवात पहिले संविधान संशोधन से हुई। उसके दुष्परिणाम स्वरूप ही कृषिक्षेत्र अर्थात भारत, इंडिया का उपनिवेश बना। किसानों पर आत्महत्या करने की नौबत आयी।

(४) कौन कौनसे संविधान संशोधन किसान विरोधी हैं?

भारत का मूल संविधान व्यक्ति स्वातंत्रता पर आधारित है। उसमें अन्य व्यावसायिकों को जैसा आर्थिक स्वातंत्र्य दिया गया था, वैसा ही स्वातंत्र्य किसानों को भी दिया गया था। लेकिन संविधान के लागू होने पर किसानों का स्वातंत्र्य कम करने के लिए संविधान में अनेक संशोधन किये गये। २०१५ के अंत तक मूल संविधान में कुल मिलाकर ९४ संशोधन किये गये। उनमें सें १ ला, ३ रा, ४ था, २४ वां, २५ वां, ४२ वां और ४४ वां यह सात संविधान संशोधन किसानों के लिए अधिक हानीकारक सिद्ध हुए।

१ ला संविधान संशोधन- १८ जून १९५१ को अनुच्छेद ३१ में पहला संशोधन कर, मूल संविधान में जिसका कोई उल्लेख नहीं है, वह परिशिष्ट ९ जोडा गया। इस परिशिष्ट में समाविष्ट किये गये कानूनों के विरुद्ध न्यायालय में जाने से रोकने का प्रावधान किया गया है। आवश्यक वस्तु अधिनियम जैसे अनेक कानून समय समय

पर इस परिशिष्ट में जोडे गये। न्यायालय में न्याय मांगने का भारतीय किसानों का अधिकार इस संविधान संशोधन ने समाप्त कर दिया।

३ रा संविधान संशोधन- २२ फरवरी १९५५ को संविधान के परिशिष्ट ७ में ३ रा संविधान संशोधन किया गया। इस परिशिष्ट में राज्य सूची, केंद्र सूची तथा सामायिक सूची दी गयी है। संविधान के अनुसार कृषी यह विषय राज्य सरकार की अधिकार कक्षा में है। सामायिक सूची के अनुच्छेद ३३ में से पूर्व की सारी बातें खारिज कर, नया मजमून दर्ज किया गया, जिस के अनुसार खाद्य पदार्थ, ढोरों की खाद, कपास, कच्चा ज्यूट इस प्रकार के विभाग कर केंद्र सरकार के नियंत्रण की व्यवस्था की गई। इस प्रकार केंद्र सरकारने राज्य सरकार के अधिकारो में हस्तक्षेप कर कृषि उत्पादनों के बाजार पर कब्जा किया। यह संशोधन आवश्यक वस्तु अधिनियम की जननी माना जाता है। फरवरी १९५५ में संविधान संशोधन हुआ और अप्रैल १९५५ में आवश्यक वस्तु अधिनियम बना।

४ था संविधान संशोधन- २७प्रैल १९५५ को अनुच्छेद ३१ में फिरसे सुधार कर चौथा संविधान संशोधन किया गया। यह संशोधन सरकार को भूमि अधिग्रहण करने का अनिर्बंध अधिकार प्रदान करता है। इस संशोधन ने केवल जायदाद के मूलभूत अधिकार को ही कमजोर नहीं किया बल्कि अनुच्छेद १३ के अनुसार संविधान कर्ताओं ने सभी मूलभूत अधिकारों को दिये हुए संरक्षण को भी कमजोर बना दिया। इस संशोधन के बाद भूमि अधिग्रहण करने का निर्विवाद अधिकार सरकार को मिला। इसमें न्यायालयों को हस्तक्षेप करने से दूर रखा गया।

२४ वां संविधान संशोधन- ५ नवंबर १९७१ को भूमि अधिग्रहण का मार्ग निर्विघ्न एवं खुला करने के लिए अनुच्छेद १३ में संशोधन किया गया। नागरिकों के मूलभूत अधिकारों को दिया हुआ संरक्षण इस संशोधन ने सीधे समाप्त कर दिया।

अनुच्छेद १३ के अनुसार भारतीय नागरिकों को उनके मूलभूत अधिकारों का संरक्षण प्राप्त था। इस अनुच्छेद में सरकार को आगाह किया था कि सरकार मूलभूत अधिकार समाप्त करनेवाले, उनका संकोच करनेवाले कोई कानून नहीं बना सकती, और ना ही आदेश दे सकती है। २४ वे संविधान संशोधन ने नागरिकों के मूलभूत अधिकारों के सुरक्षा कवच को समाप्त कर दिया।

२५ वां संविधान संशोधन- २० अप्रैल १९७२ को अनुच्छेद ३१ में नया (ग) विभाग समाविष्ट कर संविधान में दिये हुए मार्गदर्शक तत्वों को मूलभूत अधिकारों से अधिक महत्व दिया गया। ऐसा माना जाता था कि मार्गदर्शक तत्व बंधनकारक नहीं है। इस संशोधन ने उन्हें महत्व प्राप्त हुआ तथा 'लोककल्याण' के नामपर नागरिकों के

मूलभूत स्वातंत्र्य का हरण किया गया।

४२ वां संविधान संशोधन- १८ दिसंबर १९७६ को एक दिन में अलग अलग ७ अनुच्छेद तथा संविधान की उद्देशिका इनमें कुल मिलाकर ५९ संविधान संशोधन किये गये। एक दिन में इतने सारे संशोधन करने का विक्रम अन्यत्र कहीं हुआ होगा, ऐसा नहीं लगता। यह सरकार द्वारा घोषित आपातकाल का समय था। स्थूल रुप से देखना हो तो ४२ वे संविधान संशोधन का आकलन निम्नलिखित के अनुसार किया जा सकता है।

१) मूल संविधान की प्रस्तावना में जो शब्द नहीं थे, वे समाजवाद तथा धर्मनिरपेक्ष(सेक्युलर) ये शब्द जोडे गये।

२) अनुच्छेद ३१ में ३१ (सी) यह नया विभाग जोडा गया। इस संशोधन से कानून के सामने सारे समान इस तत्व को बल देनेवाला अनुच्छेद १४ तथा स्वतंत्रता का अधिकार देनेवाला अनुच्छेद १९ का संकोच किया गया।

३) जायदाद प्राप्त करना, उसका उपयोग करना, उसे बेचना या उत्तर उत्तराधिकारीयों को हस्तांतरण होना यह जायदाद के स्वातंत्र्य का अधिकार देनेवाला अनुच्छेद १९ (१) (एक) पूर्ण खारिज किया गया।

४) भूमी अधिग्रहण के लिए किये गये कानूनों को खुली छूट मिले इसलिए अनुच्छेद ३१ (ए) में अनुच्छेद १४ (कानून के सामने सब समान) तथा अनुच्छेद १९ (स्वातंत्रता का अधिकार) इन दोनों को प्रभावशून्य करनेवाली व्यवस्था की गई।

४४ वां सविधान संशोधन- ३१ अप्रैल १९७९ को जायदाद का मूलभूत अधिकार समाप्त करनेवाला संविधान संशोधन किया गया। इसी संशोधन के आधारपर नया अनुच्छेद ३००(अ) समाविष्ट किया गया। मूलभूत अधिकार याने स्वातंत्रता का अधिकार। ये अधिकार संविधान की आत्मा माने जाते हैं। संविधान कर्ताओं ने अनुच्छेद १३ के जरिये आगाह किया था कि सरकार इन अधिकारों में हस्तेक्षेप ना करे। प्रधानमंत्री नेहरुजी के समय ये अधिकार कमजोर किये गये। इंदिरा गांधी के काल में इन्हें मृत कर दिया गया और जनता पार्टी के काल में जायदाद के मूलभूत अधिकार को समाप्त कर ताबूत को अंतिम कील ठोकी गयी। जायदाद का अधिकार अब केवल संवैधानिक अधिकार बचा है। वह अब मूलभूत अधिकार नही रहा।

(५) कौन से कानून किसान विरोधी है?

अनेक कानून किसान विरोधी हैं। इन्हें समझने के लिए उन कानूनों को तीन प्रकारों में विभाजित किया जा सकता है।

१) व्यवस्था निर्माण करनेवाले कानून

२) यातनादायक कानून

३) छलनेवाले कानून या भ्रम फैलानेवाले कानून

सिलिंग, आवश्यक वस्तु तथा भूमि अधिग्रहण की तरहही आदिवासियों को गैर आदिवासी को जमीन बेचने पर प्रतिबंध लगानेवाले कानून व्यवस्था निर्माण करनेवाले कानून हैं। किसानों को हमेशा के लिए गुलाम बनानेवाले कानून है। यही कानून मुख्यतः किसानों की आत्महत्या के कारण बने।

वन्यजीव संरक्षण कानून, गोवंश हत्याबंदी कानून,वन रक्षण कानून जैसे अनेक कानून यातनादायक कानून है। ये नहीं थे तब भी किसान आत्महत्या करते थे, वे बनने पर भी किसान आत्महत्या कर रहे हैं। इस प्रकार के कानून किसानों के लिए यातनादायक है।

कुछ छलनेवाले या भ्रम फैलानेवाले कानून हैं। सतही स्तर पर वे किसानों के लिए लाभदायक दिखते हैं लेकिन होते नहीं। उनकी वजहसे दूसरों को ही लाभ होता है। जैसे, किसानों को आयकर की छूट देनेवाला कानून। किसानों को इस कानून से कोई लाभ नहीं, क्योंकि उनको व्यवसाय में हमेशा नुकसानही होता है। आयकर भरना पडे उतना उत्पन्न होता ही नहीं। लेकिन इस कानून का लाभ उन लोगों को हुआ जिनके पास 'काला धन' आता है। उन्होंने काले पैसे को खेती का उत्पन्न बताकर 'सफेद' कर लिया। खाद या पाईप लाईन पर मिलनेवाली सरकारी आर्थिक मदद का लाभ किसानों के बजाय कारखानदार तथा व्यापारियों को हुआ।

ये तीनों प्रकार के कानून किसान विरोधी है। किसान विरोधी कानूनों की सूची बहुत लंबी है। वे सारे खारिज करने चाहिए। व्यवस्था निर्माण कर स्थिर करनेवाले कानून प्रथम हटाने चाहिए। शेष को समाप्त करने में देर नहीं लगेगी। इसलिए व्यवस्था बनानेवाले कानूनों का विचार प्रथम करना चाहिए।

(६) सिलिंग कानून को विरोध क्यों है?

भूमि के बहुत छोटे छोटे टुकडे हो गये हैं। देश के लगभग ८५ प्रतिशत किसान अल्प या अत्यल्प भूमिधारक हैं। भारत में औसतन भूमिधारण एक हेक्टर है। अर्थात ८५ प्रतिशत किसान ढाई एकड क्षेत्रपर अपनी जीविका यापन करते है। दो या ढाई एकड बिना सिंचाई की भूमिपर किसान परिवार जीवन निर्वाह नहीं कर सकता। टुकडों में बटी भूमि बडी समस्या हो गई है। यह स्थिती निर्माण होने का मुख्य कारण सिलिंग का कानून है।

यह कानून व्यक्ति स्वातंत्रता में बाधा डालनेवाला तथा संविधान विरोधी है। इस के कारण किसान मुक्त रुप से व्यवसाय नहीं कर सकता।

विश्व की स्पर्धा में उतरने के लिए खेती में पूँजी निवेश आवश्यक है। छोटे छोटे टुकडों के लिए कोई अपनी पूँजी नहीं लगायेगा। भूमिधारण करने की अधिकतम मर्यादा के कारण खेती में कर्तृत्व सिद्ध करने की इच्छा रखनेवाले लोगों का उत्साह टूट जाता है। कल्पक एवं धाडस करनेवाले युवा आकर्षित नही होते। इस प्रकार के अनेक कारणों से सिलिंग कानून तत्काल खारिज होना चाहिए।

(७) सिलिंग कानून का स्वरुप क्या है?

सिलिंग का अर्थ होता है, अधिकतम मर्यादा। एका किसान परिवार अधिकतम कितनी खेत जमीन की मालकियत रख सकता है, उस की मर्यादा तय करनेवाला कानून। यह कानून केवल खेती की भूमिपर ही लागू किया गया है। खेत-भूमि की अधिकतम मर्यादा तय करनेवाला यह कानून है। अन्य भूमि पर सिलिंग नहीं है। नागरी भूमिधारण कानून बना था लेकिन बाद में वह खारिज कर दिया गया। खेत जमीन पर सिलींग कानून कायम रखा गया।

खेत-भूमि पर लागू अधिकतम भूमि धारण कानून राज्य सरकार के अधीन है। अलग अलग राज्यों की सिलिंग की मर्यादा अलग अलग है। महाराष्ट्र में बिना सिंचाई की (जिरायत) भूमि ५४ एकड तथा सिंचाई की भूमि १८ एकड की मर्यादा है। अधिक ब्योरा कानून में दिया है।

१९५१ को जमिनदारी उन्मूलन कानून आया तभी कुछ लोग उसके विरोध में न्यायालय में गये थे। बिहार उच्च न्यायालय ने इसके विरोध में निर्णय देकर स्पष्ट रुप से कहा था कि यह कानून संविधान से विसंगत है। यह निर्णय आने के बाद तुरंत संविधान में परिशिष्ट ९ जोडा गया। हालांकी अन्य दो हाय कार्टो का फैसला सरकार के पक्ष में आये थे। बिहार हाय कोर्ट के फैसले के खिलाफ सर्वोच्च न्यायालय में जाया जा सकता है, ऐसी सलाह उस समय के वरिष्ट सांसदोंने दी थी। लेकिन सरकार किसी का कुछ भी सुनने की मनःस्थिती में नही थी। आगे चल कर सिलींग कानून लाया गया और उसे भी परिशिष्ट९ में डाला गया। परिशिष्ट ९ में समाविष्ट कानूनों के विरुद्ध न्यायालय में नही जा सकते। इसलिए यह कानून आज तक बना रहा है।

महाराष्ट्र के लगभग २७ कानून इस परिशिष्ट ९ में है। सभी किसी न किसी तरह खेती से जुडे है। उनमें से १३ कानून सीधे भूमिधारणा से जुडे है।

महाराष्ट्र में सिलिंग का कानून १९६१ में आया। परंतु उसे तुरंत लागू नहीं किया गया। १९७१ को केंद्र सरकार ने सभी राज्यों के मुख्यमंत्रियों की बैठक बुलाई। उसके बाद केंद्र के निर्देशों के अनुसार १७ राज्योंने सिलिंग की मर्यादा तय की। महाराष्ट्र ने बिना सिंचाई की भूमि की मर्यादा ५४ एकड तय की। केंद्र के निर्देश के अनुसार वह

सबसे ज्यादा थी। पंजाब, आंध्र आदि प्रदेशों ने भी लगभग यही मर्यादा रखी। लेकिन पश्चिम बंगाल ने १८ एकड इतनी कम मर्यादा कायम की। महाराष्ट्र ने सिंचाई की भूमि की मर्यादा १८ एकड तो पश्चिम बंगाल ने १३ एकड तय की। महाराष्ट्र में इस कानून को १९७२ के अकाल के बाद लागू किया।

विविध राज्यों में सिलिंग की मर्यादा (हेक्टर में)

१ हेक्टर = २.४७ एकड

राज्य	सिंचित भूमि (२बार फसल)	सिंचित भूमि (१बार फसल)	बिना सिंचाई की भूमि
केंद्र का सुझाव (१९७२)	४.०५ से ७.२८	१०.९३	२१.८५
आंध्रप्रदेश	४.०५ से ७.२८	६.०७ से १०.९३	१४.१६ से २१.८५
असम	६.७४	६.७४	६.७४
बिहार	६.०७ से ७.२८	१०.१२	१२.१४ से १८.२१
गुजरात	४.०५ से ७.२९	६.०७ से १०.९३	८.०९ से २१.८५
हरियाणा	७.२५	१०.९०	२१.८०
हिमाचल प्रदेश	४.०५	६.०७	१२.१४ से २८.२३
जम्मू-कश्मीर	३.६० से ५.०६	३.६ से ५.०६	५.९५ से ९.२०
लडाख	७.७		
कर्नाटक	४.०५ से ८.१०	१०.१२ से १२.१४	२१.८५
केरल	४.८६ से ६.०७	४.८६ से ६.०७	४.८६ से ६.०७
मध्यप्रदेश	७.२८	१०.९३	२१.८५
महाराष्ट्र	७.२८	१०.९३	२१.८५
मणिपुर	०५.००	०५.००	०६.००
ओडिसा	४.०५	६.०७	१२.१४. से १८.२१
पंजाब	७.००	११.००	२०.५०
राजस्थान	७.२८	१०.९३	२१.८५ से ७०.८२
तमिलनाडू	४.८६	१२.१४	२४.२८
सिक्कीम	५.०६	-	२०.२३
त्रिपुरा	४.००	४.००	१२.००
उत्तरप्रदेश	७.३०	१०.९५	१८.२५
पश्चिम बंगाल	५.००	५.००	७.००

पूर्वांचल के राज्य छोडकर ओडिसा, जम्म-कश्मीर, असम, केरल तथा पश्चिम बंगाल इन राज्यों ने बिना सिंचाई की भूमि का क्षेत्र सबसे कम रखा।

(८) सिलिंग का कानून पक्षपाती कैसे?

एक एकड की किमत एक करोड मान लिजिये (इतना दाम कहीं नहीं है) तो ५४ एकड के ५४ करोड रुपये होते है। मतलब महाराष्ट्र का किसान ५४ करोड रुपयों से अधिक रुपयों की खेती की जायदाद नहीं रख सकता। (वैसे तो आज ५४ एकड के मालिक खोजकर भी नहीं मिलतें) इसके विपरित अंबानी की जायदाद कई लाख करोड बताई जाती है, वे चाहे जितने धन के मालिक हो सकते है। किसान मात्र नहीं। क्या यह पक्षपात नहीं है?

कारखानदार कितने कारखाने शुरु करे इसपर कोई बंधन नहीं है। हॉटेल चलानेवाला चाहे जितने हॉटेल खोल सकता है, वकील कितने मुकदमे लढे इस पर कोई बंधन नहीं, डॉक्टर कितने रोगीयों को जाँचे इसपर बंधन नही, इतना ही नहीं एक नाई कितने लोगों की हजामत करे या कितनी दुकाने खोले इसे मर्यादा नहीं। व्यापारी, कारखानदार, व्यावसायिक किसीपर भी बंधन नहीं। केवल अकेले किसानपर ही बंधन क्यों? यह पक्षपात नहीं तो और क्या है?

(९) सिलिंग कानून का उद्देश्य जमिनदारी समाप्त करना नहीं था क्या?

यह सच है कि भारत में जमीनदारी और साहूकारी के कारण अनेक किसानों की भूमि हडप कर ली गई थी। वह भूमि उनके कब्जे से निकालकर मूल किसान मालिक को वापस देना न्यायोचित था। देश स्वतंत्र होने के बाद विशेष न्यायालय स्थापन कर दस वर्ष की अवधी में यह काम किया जा सकता था। 'भूमि की वापसी' जैसा कार्यक्रम लिया जा सकता था। जमिनदारी समाप्त करने के बहाने अन्य किसानों की जायदाद पर मर्यादा लादना जरुरी नहीं था।

जमीनदारी खत्म करने के अनेक मार्ग होने के बावजूद सरकारने सिलिंग कानून जारी किया। इसका मतलब यह कि सरकार को केवल जमीनदारी खत्म करने के लिए यह कानून जारी नहीं करना था। अफसोस की बात यह है कि, सरकारने जमीनदारी खत्म करने के लिए 'हम सिलिंग का कानून जारी कर रहे हैं', इस बात के इतने ढोल पीटे कि आज सत्तर वर्ष के बाद भी अनेक बुद्धिजीवि सिलिंग कानून को जमीनदारी खत्म करने का उपाय मानते हैं।

जमीनदारी खत्म करने के लिए सिलिंग कानून की क्या आवश्यकता थी? जो जमीनदार थे उनकी अतिरिक्त जमीन की मालकीयत खत्म कर सकते थे। दूसरों पर

बंधन लादने का क्या मतलब? यह तो वह ही बात हुई के शिकार करने के लिये पूरे जंगल को ही जला देना। अमेरिका में हमारे देश से अधिक भयंकर जमीनदारी थी। उन्होंने सिलिंग के कानून को लागू नही किया और जमीनदारी को खत्म कर दिया। जमीनदारी खत्म करने के लिए अन्य लोगों के मूलभूत अधिकार खत्म करने की आवश्यकता नहीं थी।

यहाँ यह समझना आवश्यक है कि बहुत अधिक जमीन की मालकीयत का अर्थ जमीनदारी नहीं होता। जमीनदारी तब शुरु होती है जब उस जमीन में काम करनेवाले लोग बेगार बनाये जाते हैं। जहाँ बेगार नहीं हैं, ऐसे समाज में जमीनदारी हो ही नहीं सकती। 'युनो' की निर्मिती के बाद मानवी अधिकारों को विश्वभर में स्थान मिला। भारत के संविधान में बेगार का तीव्र विरोध किया गया है। जहाँ बेगार बेकायदा मानी जाती है वहाँ मानवी मूल्यों को प्राधान्य दिया जाता है। वहाँ जमीनदारी चल ही नहीं सकती।

जब तक पूँजी निर्मिती का खेती यही एकमात्र साधन था तब तक यह भय था। अब समय के साथ परिस्थिती बदली है। पूँजी निर्माण करने के अन्य स्त्रोत निर्माण हुए है। ऐसे समाज में फिरसे जमीनदारी आ जायगी यह भय बेमतलब का है।

जमीनदारी खत्म करने के लिए सिलिंग की आवश्यकता ही नहीं थी। शायद वह हेतु भी नहीं था।

(१०) सिलिंग कानून बनाने के पीछे क्या हेतु होगा?

उस समय रुस में बोल्शेविक क्रांति हुई थी। लेनीन ने भूमि का राष्ट्रीयीकरण किया था। संसार भर में उसका डंका पिट रहा था। ऐसे समय में संविधान निर्मिती का काम भारत में चल रहा था। संविधान सभा में भूमि के राष्ट्रीयीकरण का प्रस्ताव आया था। उसपर बडी बहस हुई। राजगोपालाचारी आदि नेताओं के विरोध करने के कारण वह प्रस्ताव खारिज किया गया। मूल संविधान में जायदाद का अधिकार मूल अधिकार माना गया था। बात संसद में पहुंची (संविधान सभा के सभी सदस्य संसद के सदस्य थे) जिन लोगों को भूमि के राष्ट्रीयकरण में विशेष रुची थी वे जमीन के पुनःश्च बटवारे के आग्रही थे। जमीनदारी के प्रति लोगों के मन में गुस्सा था। उस भावना का लाभ उठाकर सिलिंग कानून जारी किया गया।

सिलिंग के कारण जो अतिरिक्त जमीन निकलती उस पर सरकार का अधिकार होता। मूल मालीक सरकार। बाद में जिसे जोताई के लिए दी जाती है उसका नाम जोताई करनेवाले के रुप में दर्ज होता है। भूमिहीन जोताई करनेवाला भूमि का मूल

मालिक नहीं बनता। वह केवल भूमि की जोताई कर सकता है। उसे अन्य कोई भी मालकीयत के हक नहीं होते हैं। इसका अर्थ इतना ही कि, सिलिंग के कारण निकली अतिरिक्त भूमि सरकार की होती। अतिरिक्तही सही मालकीयत सरकार की होगी। आहिस्ता आहिस्ता सब जमीन का राष्ट्रीयीकरण किया जा सकेगा। इस प्रकार का एक हेतु हो सकता है।

इस कानून के अन्य उद्देश्य भी दिखलाई देते हैं।

अंग्रेजो के समय अपने देश में औद्योगिकीकरण शुरु हुआ। उस समय मजदूरी की अपेक्षा से असंख्य किसान तथा ग्रामीण मजदूर गांव छोडकर शहरों में आते थे। अभी अभी देश स्वतंत्र हुआ था। सरकार का अग्रक्रम औद्योगिकीकरण था। बहुत बडी संख्या में लोग शहरों में आये तो उनको काम देना संभव नहीं, शहरों पर तनाव बढेगा। उसे टालने के लिए किसानों को खेती काम में ही रोके रखने की नीति तय हुई होगी। भूमि के छोटे छोटे टुकडों में अधिक से अधिक लोग अटके रहे, इसलिए यह कानून बना होगा। ऐसा भी माना जा सकता है।

अनाज की कमी का वह काल था। कम से कम भूमि में अधिक से अधिक लोग अपना उदर निर्वाह करे। साथही देश के लिए आवश्यक अनाज का निर्माण भी वे करें इसलिए अधिक से अधिक लोगों को कृषिकर्म में लगाने की रणनीति इसके पीछे हो सकती है।

राज्यकर्ताओं के मन में खेती और किसानों के प्रति एक विशिष्ट प्रकार का पूर्वाग्रह था, तुच्छता भाव था। किसान कैसे भी जिये तो हर्ज नहीं लेकिन 'इंडिया' का विकास होना चाहिए, यह भावना उनके मन में थी। या खेती का शोषण किये बगैर इंडिया का विकास नहीं होगा, यह सूत्र स्वीकारने के कारण किसानों के पैरों में श्रृंखलाएँ डाली गयी। खेती के प्रति तिरस्कार, जलन जैसे भाव सिलिंग कानून जारी करने के पीछे रहे होंगे, ऐसा लगता है।

(११) भूमिहीनों को जमीन देने का विरोध है क्या?

नहीं, बिल्कुल भी नहीं। हर एक व्यक्ती के पास जायदाद होनी चाहिए अन्यथा बीनाजायदाद वाला समाज गैर जिम्मेदार होने की संभावना होती है। निजी जायदाद से मनुष्य को पूर्णत्व प्राप्त होता है। उसे वसुंधरा के प्रति आस्था महसूस होती है। निजी जायदाद के बारे में कई बातें बताई जा सकती है। इसलिए कोई जायदाद प्राप्त करता हो तो उसका विरोध नहीं हो सकता। जमीन बटवारे को विरोध है क्या? यह प्रश्न, निजी जायदाद के समर्थकों को पूछने के बजाय निजी जायदाद को विरोध

करनेवालों से पूछना चाहिए।

हमारे देश में जमीन वितरित करने का जो कार्यक्रम हुआ वह काम एक का और नाम दूसरे का इस स्वरुप का था। उसे हमारा विरोध है। भूमि का वितरण कैसे हुआ? सिलिंग कानून लागू किया गया। मर्यादा से ज्यादा जमीन जहाँ दिखाई दी उसे सरकारने मुफ्त में या बहुत कम मूल्य देकर अपने कब्जें में लेली। वह जमीन भूमिहीनों को जोताई के लिए दी। मतलब जमीन किसानों की, उसे सरकारने जबरन हथिया लिया। उसका वितरण किया। जमीन किसानों की और वितरण किया सरकारने यह प्रकार आक्षेपार्ह था। उस समय जो सरकारी नोकरी में थे उनकी जमीन सरकारने क्यों नही ली? क्या किसीने वैसी माँग की? सरकारी नोकरी करनेवाले को कानूनन दूसरा व्यवसाय करने की मना ही है। यह नियम सरकारने ही बनाया है। उस नियम के आधार पर सरकारी कर्मचारियों की जमीन सरकार के कब्जें में कर भूमिहीनों में वितरित की जा सकती थी। पर सरकारने वैसा नहीं किया। आश्चर्य यह कि भूमिहीनों के प्रति सहानुभूति दिखलानेवालों ने भी वैसी माँग नहीं की। सरकारी नोकरों को धक्का भी न लगे और दूसरी ओर जो कुछ किसान का है, उसे उठाकर ले चल पडे। यह किसानों पर अन्याय करनेवाला व्यवहार है। किसानों की अवस्था कोई भी आये और ठग कर चला जाये, ऐसी कर डाली है।

सूचना अधिकार के तहत मिली सरकारी जानकारी के अनुसार महाराष्ट्र में ७ लाख २५ हजार ७८ एकड इतनी खेत-भूमि अतिरिक्त घोषित की गई। उसमें से ६ लाख ७० हजार ८१५ एकड भूमि सरकारने अपने कब्जे में ली। कब्जे में ली गई भूमि के आज के औसतन दाम १० लाख रुपये प्रति एकड मानले तो सिलिंग कानून का उपयोग कर सरकारने महाराष्ट्र के किसानों के लगभग ७० लाख करोड़ रुपये लूटे हैं।

कब्जे में ली गई भूमि में से ६ लाख ३४ हजार १५८ एकड भूमि का वितरण किया गया। लाभ पानेवालों की संख्या १ लाख ३९ हजार ७५५। औसतन एक भूमिहीन को साढे चार एकड जमीन मिली। १९७२ से १९७६ इस कालखण्ड में महाराष्ट्र में सिलिंग कानून कार्यान्वित हुआ। उस काल में जिनको जमीन मिली उनकी तिसरी चौथी पीढी के वारिस को जमीन का कितना टुकडा मिला होगा इस पर विचार कीजिए। कितने लोगों ने खेती की? कितने लोग खेत भूमि बेचकर चले गये? कितने लोगों के वारिस आज खेती करते है? इस संदर्भ में निश्चित जानकारी उपलब्ध नहीं है। इस बारे में न सरकार ने अध्ययन किया, न विश्वविद्यालयों ने, ना किसी संस्था ने किया। यदि इस प्रकार का अध्ययन किया गया होता तो जमीन के इस बटवारे की निरर्थकता तथा इसका रहस्य खुल गया होता। सामान्य निरिक्षण के बाद ध्यान में आता है कि बहुत

सारे लोगों ने वितरित हुई जमीन को बेच दिया और शहरों में चले गये। शहर में झोपडियों में रहे। संतान को पढाया। उनमें से कुछ लोगों के बच्चे आज विदेशों में है। लेकिन जो खेती ही करते रहे, उनकी आर्थिक अवस्था बिकट हो गई। उनमें से कइयों ने आत्महत्या की है।

किसानी यह नुकसानकारक व्यवसाय है। यह व्यवसाय नुकसानी में ही रहे यह सरकार की अधिकृत नीति है। इस प्रकार का व्यवसाय किसी के गले में बाँधने का मतलब उसे वधस्तंभ की ओर जाने के लिए बाध्य करना है। भूमि वितरण कार्यक्रम का सीधा अर्थ गरीबी का वितरण करना होता है। जायदाद के रुप में भूमि वितरण ठीक है, लेकिन व्यवसाय के रुप में उसे देखना गलत है।

किसी की जायदाद लेकर दूसरे को देनी हो तो उसकी अनुमति लेनी चाहिए। उसका सही तथा योग्य मूल्य चुकाना चाहिए। उसी प्रकार जिसका वह व्यवसाय है उसकी जमीन लेने के बजाय जो अन्य व्यवसायों में है (जैसे सरकारी नोकर) उनकी जमीन लेना अधिक न्यायसंगत हुआ होता। भूमि वितरण कार्यक्रम के लिए भूमि सिलिंग का कभी भी समर्थन नहीं किया जा सकता।

और एक मुद्दा, आज किसी के भी पास सिलिंग से ज्यादा भूमि नहीं है। बल्कि सिलिंग से बहुत कम भूमि बची है। अब वह भूमि वितरण के लिए निकालने जितनी भी बची नहीं है। फिर आज सिलिंग क्या औचित्य है? औचित्य न होते हुए यह कानून अब भी क्यों लागू है?

(१२) सिलिंग कानून खत्म किया तो पूँजीपति छोटे किसानों की जमीन खरीदकर उन्हें भूमिहीन कर देंगे, उसका क्या?

यह भय निरर्थक है। पूँजीपति या कारखानदारों को आज भी (सिलिंग का कानून होते हुए भी) जमीन खरेदी करने में कोई बाधा नहीं है। कहते हैं, सहारा ग्रुप के पास ३८ हजार एकड जमीन है। अन्यों के पास कितनी होगी पता नहीं। पूँजीपति, कारखानदार किसानों की जमीन हडप न ले इसके लिए सिलिंग कानून में कोई व्यवस्था नहीं है। सिलिंग कानून होने पर भी उन्हें भूमि की खरीद करने की मनाही नहीं है। सिलिंग का बंधन केवल किसानों पर है। कारखानदार और पूँजीपतियों को सिलिंग कानून समाप्त होने का इंतेजार करने की कोई आवश्यकता नही है।

सिलिंग का कानून खारिज किया तो पूँजीपति आकर किसानों की जमीन हडप लेंगे यह एक प्रकार की नासमझी है। इस बात को भलिभाँति समझने के लिए यह बात ध्यान में लेना जरुरी है कि सिलिंग का कानून केवल खेती-भूमि पर लागू है। अर्थात किसानों पर लागू है। अन्य किसी प्रयोजन के लिए नहीं। पूँजीपतियों को आज भी,

जितनी चाहे उतनी भूमि खरेदी करने की मनाही नहीं है। अनेक कारखानदारों के पास हजारों एकड भूमि यूँही खाली पडी है। कोई भी कितनी भी जमीन ले सकता है। केवल खेती के लिये प्रयोग मे लाई जानेवाली जमीन पर ही प्रतिबंध है। खेती के लिए अधिकतम सीमा लाँघ नहीं सकते। मतलब इतना ही कि सिलिंग कानून केवल खेती पर लागू होने के कारण भूमि खरेदी करने के लिए अन्य लोगों को छूट है। सिलिंग खारिज करने पर छूट मिलेगी यह मानना नासमझी है।

सिलिंग खारिज करने पर किसान तुरंत जमीन बेचने लगेंगे ऐसा मानना भी गलत है। गरीब आदमी जिस तरह पत्नी का मंगलसूत्र संभालता है वैसे ही गरीब लोग अपनी जमीन संभालकर रखते हैं। स्थावर जायदाद गरीबों के लिए आधार होती है।

और एक मुद्दा समझ लेना चाहिए। फोर्ब्ज नामक पत्रिका हर वर्ष संसार के सबसे अधिक सौ रईस लोगों की सूची प्रकाशित करती है। अब तक इन सौ लोगों की सूची में किसी किसान का नाम कभी भी नहीं आया है। भारत को छोड दो, यहाँ की सरकारे किसान विरोधी नीतियों को अपनाती रही, इसलिए भारत के किसान का नाम नहीं आया। लेकिन संसार के अनेक देशों में सिलिंग नहीं है। वहाँ के किसी किसान का नाम इस सूची में कभी तो आना चाहिए था। पर वहाँ से भी नहीं आया। इसका कारण क्या? इन कारणों की खोज करने पर पता चलता है कि किसानी कर रईस होने की अपेक्षा झटपट रईस होने के अनेकानेक मार्ग उपलब्ध है। पूँजीपति, कारखानदार उन मार्गों को प्राधान्य देते हैं। इसलिए किसानी कर संसार के सौ रईसों में नाम आने का स्वप्न कोई देखता नहीं।

पूँजीपति आकर जमीन हडप लेंगे ये कहना याने 'गब्बरसिंह आयेगा' ऐसा डर दिखाकर रामपुर के लोगों को दबाकर रखने जैसा है। सिलिंग कानून किसानों के पैरों की श्रृंखलाए है और उन्हें तोडना ही चाहिए।

(१३) सिलिंग कानून खारिज करने पर किसानों को क्या लाभ?

सिलिंग कानून लागू होने से किसानों का जो नुकसान हो रहा है वह कानून खारिज करने के बाद नहीं होगा। यही सही और बडा लाभ है।

अपने देश में किसान परिवारों के पास औसत एक हेक्टर भूमि है। ८५ प्रतिशत किसान अल्प या अत्यल्प भूमिधारक हैं। खेती संबंधी यह वास्तविकता भीषण है। एकड दो एकड भूमिधारण करनेवाले व्यक्ति की खेती में कोई भी व्यवहारी आदमी पूँजी नहीं लगायेगा। खेती में पूँजी की लागत बढानी हो तो भूमि की यह टुकडों की रचना बदलनी होगी। सौ-दो सौ या हजार दो हजार एकड क्षेत्र में काम करने के लिए कंपनियाँ तैयार हुई तो पूँजी की लागत के लिए देशी-विदेशी, निजी-सरकारी,

बैंक या वित्तिय संस्थाएँ आगे आ सकती है। कृषी-भूमि की यह रचना न बदलकर पूँजी लागत की अपेक्षा व्यर्थ है। ऐसी कंपनियाँ प्रक्रिया उद्योग शुरु करेंगी। जिससे नये रोजगार निर्माण होंगे।

महाराष्ट्र एवं अन्य अनेक राज्यों में सिलिंग कानून कठोरता से लागू हुआ। परिणाम क्या हुआ? ५४ एकड भूमिधारक को चार लडके हुए। उनमें बंटवारा हुआ। प्रतिव्यक्ति साढे तेरह एकड भूमि बटी। दूसरी पीढी में उन्हें चार लडके हुए। उनका बंटवारा हुआ और वे अल्प भूधारक बन गये। किसानी में कुछ बचने ही नहीं दिया। प्रगति की महत्वकांक्षा खत्म कर डाली। किसानी के बाहर रोजगार नहीं बढे। किसानी पर बोझ बढता गया और भूमि के छोटे छोटे टुकडे होते चले गये। आज ८५ प्रतिशत किसान अल्प भूमिधारक है। इस विपन्नावस्था से बाहर निकलने के लिए अनेक उपाय करने होंगे। उनमें से सिलिंग कानून खारिज करना यह एक महत्वपूर्ण उपाय है।

सिलिंग लादने के कारण भूमि के टुकडे हुए, छोटे छोटे टुकडे हुए। परिणाम स्वरुप कृषी उत्पादन बेचनेवालों की संख्या बढती चली गयी। मार्केट कमिटी के नियमों के कारण कृषी उत्पादन खरीदनेवालों की संख्या कम रखी गयी। बेचनेवाले ज्यादा और लेनेवाले कम हों तों दाम गिरेंगे ही। कृषी उत्पादनों के दाम निचले स्तर पर रहने का यह भी एक कारण है। उत्पादक विक्रेताओं की संख्या कम हुई तो उनके माल को उचित दाम मिल सकते हैं। उचित दाम मिलने तक रुकने की क्षमता के साथ गोदाम, अधुनिक तंत्रज्ञान और पूँजी जैसी सुविधाएँ उनके पास होंगी। सिलिंग कानून खारिज हुआ तो खेती-क्षेत्र में किसानों की कंपनियाँ स्थापित होंगी और परिस्थिती उत्पादकों के लिए अनुकूल बनेगी।

सत्तर के दशक से संसारभर में जमीन की मालकीयत का क्षेत्र बढ रहा है। लेकिन भारत में कम कम हो रहा है। इसका मतलब अन्य देशों में भूमि का बडा टुकडा पर कम लोगों के उत्पन्न का साधन है और भारत में छोटे टुकडे पर ज्यादा लोगों को उदर निर्वाह करना पडता है।

जमीन का क्षेत्र बडा होने के कारण वहां नई तकनिक उपयोग में लायी जाती है। खेती के छोटे छोटे तुकडे होने के कारण हम नया तकनिक इस्तेमाल करने की स्थिति में नहीं है। विश्व की अत्यधुनिक किसानी से हमारा दो एकडवाला किसान कैसे स्पर्धा कर सकता है? सिलिंग खारिज होने के बाद भारतीय किसान इस स्पर्धा में शामिल हो सकता है। उसे उसके फायदे मिल सकते हैं।

दो एकड का मालिक, कितनी भी फसल निकली, आज से अधिक दुगुने दाम भी मिले, तो भी वह मनुष्य की जिंदगी (कम से कम चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी जैसी) जी नहीं सकता। ऐसी परिस्थिती में सिलिंग की उपलब्धी का फिर से विचार किया जाना

चाहिए। खेती-भूमि की पुनर्रचना के बिना किसानों को बेगारी से मुक्ति नहीं मिल सकती। जिन्हें लगता है कि किसान गुलाम रहे, उसके जीवन में सुधार न हो वे किसानों का पक्ष लेकर रोने-धोने का नाटक कर रहे हैं पर जैसे ही कानून बदलने की बात आती है तो विरोध करते हैं या तुरंत विषयांतर कर देते हैं। वह नही चाहते की किसानों की हालत बदले. क्यों की किसानों की हालत सुधरेगी तो वह अपना उल्लू ठीक नही कर पायेंगे।

संसारभर में कृषि में अनेक बदलाव हो रहे है। नया तकनिक आया है। उनका उत्पादन खर्च कम हुआ है। संसार में खेती का उत्पादन अत्यंत गतिसे बढ रहा है। इस कारण संसार के बाजार में खेती उत्पादन के दाम घट रहे हैं। इस स्पर्धा का मुकाबला करना हो तो हमें बहुत बदलाव करनें होंगे। उसकी शुरुआत किसान विरोधी कानून समाप्त कर करनी होगी। भारत की भौगोलिक परिस्थिति खेती के लिए अनुकूल है। हम पुरे विष्व में सब से आगे रह सकते हैं।

सिलिंग कानून खारिज होने पर जागतिक स्पर्धा का मुकाबला करने की क्षमता रखनेवाले किसान अपनी प्रतिभा का प्रयोग कर सकेंगे। कंपीयों द्वारा खेती होगी तब अनेक कंपनीया अपने माल पर प्रक्रिया करना शुरू कर देंगी। खेती के अलावा प्रक्रीया उद्योग में शाश्वत रोजगार निर्माण होंगे। हमारे असंक्ष्य बेरोजगार युवाओं को रोजगार मिल सकेगा।

अल्पकाल के लिए फायदा चाहिए या दीर्घकालीन फायदे के लिए स्वातंत्रता? इसका निर्णय करने का समय आ गया है। सिलिंग कानून खारिज करने से जो परिस्थिति बनेगी उसका किसानों को दीर्घकालीन लाभ हो सकता है। देश भी सक्षम बनेगा।

(१४) किसानों को खेती करना छोड देना चाहिए क्या?

खेती करे या छोड दे, इसका निर्णय व्यक्ती पर छोड देना चाहिये, जो चाहे करे और जो नही चाहे छोड दे। इस प्रकार की परिस्थिति निर्माण होनी चाहिए।

जिनको खाने के लिए रोटी और अन्य खेती उत्पादन लगते है, उन्हें इसकी चिंता करनी है। आपको खेती उत्पादन आवश्यक है इसलिए आप की जरूरत पुरी करने के लिये हम खेती में गुलाम जैसी मेहनत करते रहे यह अपेक्षा ठीक नहीं है।

किसी जमाने में विकसित देशों में यह प्रश्न पूछा गया था। तब नगरनिवासी किसानों को बिनती करने लगे कि, 'आप कृपा कर खेती करें।' इससे खेती के लिए अनुदान देने की नीति सरकार को अपनानी पडी। नगरनिवासीयों को कृषीमाल की जरूरत थी, इसलिए उन्होंने किसानों को मदत दी। हमारे देश में उलटी स्थिति है। यहां किसानों को याचक बना दिया गया है, इसी लिये यहां टुकडा फेंकने जैसी मदत

की जाती है। विकसित देश और अपने देश के कृषी अनुदान में यह मूलभूत फर्क है।

किसानी छोडने की प्रक्रिया नैसर्गिक है। संसारभर में यह प्रक्रिया होती आयी है। चार भाईयों में से तीन भाई खेती से बाहर निकल जाते हैं। एक भाई अच्छे ढंगसे खेती संभालता है, यह सही पद्धति मानी जाती है। हमारे यहाँ विकास का जो मॉडेल स्वीकार किया गया उसमें बाहर निकलने का मार्ग बंद कर दिया गया। खेती संभालते जीना और खेती में ही मरना यह भारत के किसान की अगतिक अवस्था बना दी गयी है। घर को आग लगा दी गयी और बाहर निकलने का रास्ता बंद कर डाला। इस प्रकार का क्रूर व्यवहार किया गया है।

१९९० के बाद 'इंडिया' में रोजगार का वातावरण तैयार होते ही किसानों के लडके लडकियाँ खेती क्षेत्र से बाहर निकले। आज बहुत सारे किसान यही सोचते हैं कि अपने बच्चे खेतीसे अलग कोई रास्ता चुने। वह वापस खेती में न आयें।

खेती कौन करेगा? भारत में जल्दी ही यह प्रश्न उपस्थित होनेवाला है। वह जितनी जल्दी उपस्थित होगा, उतना किसानों के लिए अच्छा होगा।

(१६) सरकार को सिलिंग कानून खारिज करना राजकीय दृष्टि से नुकसानकारक होता होगा तो मध्यम मार्ग कौनसा?

हमारे देश में बडा कदम उठाने की हिमंत किसी भी राजकीय दल में नहीं है। मजबूरी होती है तभी निर्णय लेते हैं। गॅट में शामिल होने निर्णय भी विशिष्ट परिस्थिती का परिणाम था। किसानों की मुक्ती का हरएक विषय भारत के राजनैतिक दल टालते आयें हैं। अपनी इच्छा से कोई राजनितिक दल सिलिंग जैसा कानून समाप्त करने में आगे आयगा ऐसी संभावना बहुत कम है।

सिलिंग कानून खारिज करने में किसानों के नाराज होने का प्रश्न ही नहीं उठता। फिर किसकी नाराजी का विचार कर राजकीय दल हिचकिचाते है? कृषी उत्पादन सस्ता मिले बल्कि मुफ्त ही मिले, इस प्रकार की जिन 'इंडियन' मतदारों की भावना है, उनसे सरकार डरती है। वे शोर मचायेंगे। सरकार उनके शोर मचाने से घबराती है। यह शोर मचाना तभी शुरु होता है जब किसानों के हित का विषय आता है। कर्मचारियों के वेतन वृद्धि के समय ये लोग चुप्पी साध लेते हैं। कर्मचारियों के वेतन के लिए स्थापित आयोग क्या देश के हित में है? क्या गरीबों के फायदे का है? पर उनके विरोध में शोर नहीं मचता। क्योंकि उस में नोकरीपेशा लोगों का लाभ है। अनुत्पादक समुह संघटित है और वह सर्जकोंपर हावी हो गया है। यह स्थिती खतरनाक हो चुकी है।

मूलतः कृषीभूमि की अधिकतम मर्यादा का (सिलिंग) कानून समाप्त होना चाहिए लेकिन यदि सरकार को नागरी मिडीया, एन.जी.ओ. या राजकीय विरोधकों के शोर मचने का डर लगता हो तो कम से कम, 'फार्मर्स प्रोड्युसर्स कंपनियों' को इस कानून से मुक्त करना चाहिए। फार्मर्स प्रोड्युसर्स कंपनियों का जन्म समूह (ग्रुप) खेती के माध्यम से हुआ है। यह कंपनियाँ किसानों की है। वह निविष्ठा तथा बिक्री इन दो क्षेत्रों में आज काम करती हैं। लेकिन उत्पादन भूमि के मालिकों को अलग अलग ही करना पडता है। इन कंपनियों को खेती करने का अधिकार मिला तो वह अधिक कल्पक एवं परिणामकारक ढंग से कर सकती हैं। उसके लिए सिलिंग के कानून में एक छोटासा बदलाव करना पडेगा। जिस प्रकार १) सरकार, २)कृषि महामंडल तथा ३) कृषि विश्वविद्यालयों को सिलिंग कानून से मुक्त रखा गया है उसी प्रकार इन किसान कंपनियों को उस सूची में जोड देना चाहिए। ये कंपनियाँ किसानों की हैं। सरकार उन्हें प्रोत्साहन दे रही है। उन्हे सिलिंग कानून से मुक्त कर, सिलिंग जैसा असंवैधानिक कानून समाप्त करने का आरंभ किया जा सकता है।

सिलिंग कानून राज्य सरकार के अधिकार में है। यह कानून संविधान के परिशिष्ट ९ में है, फिर भी राज्य सरकार इसमें संशोधन कर सकती हैं।

किसानों की कंपनीयां बनने से कई लाभ मिल सकते हैं। सही ढंग से कंपनी चली तो किसान खेती करके जितना कमा पाते, उस से अधिक वह लाभ पा सकते है। इन कंपनीयों को काफी वित्त सहाय्यता मिल सकती है। माहिर युवा खेती और मॅनेजमेंट का संचालन करेंगे तथा व्हॅल्यू एडिशन के लिये यह कंपनीयां नये उद्योग भी शुरू कर सकती हैं। जमीन का विघटन होना रुक जायेगा तथा कंपनी के शेअर्स का बटवारा होगा।

(१७) संसार के अन्य देशों में भूमिधारण की परिस्थिति कैसी है?

विकसित देशो में भूमिधारण का क्षेत्र बढ रहा है। इसके विपरित अपने देश में औसत क्षेत्र कम हो रहा है। इसका मतलब यह है कि, वहाँ २०० एकड भूमि एक परिवार के उत्पन्न का साधन है और हमारे यहाँ २०० एकड भूमि में लगभग सौ परिवारों को अपना उदर निर्वाह करना पडता है।

भारत में २०१७ में ९१ प्रतिशत किसानों के पास एक हेक्टर से कम भूमि है। यह बात केंद्रीय कृषिमंत्री ने संसद में कही। अमरिका में औसत भूमिधारण क्षमता ४५० एकड है। ब्राझील में २०० से १००० एकड, ऑस्ट्रेलिया में भूमिधारण ५००० एकड से ज्यादा है। दो-ढाई एकड कहाँ और २०० और दो हजार एकड कहाँ? विविध

देशों की संख्या आँखों में अंजन डालनेवाली है।

१९७० और आज की खेत-जमीन क्षेत्र की यह भिन्न देशों की स्थिती चौकानेवाली है।

खेती का क्षेत्र : भिन्न देशों की स्थिती

भूमि आकार (हेक्टर में)

देश	वर्ष	खेती का क्षेत्र	वर्ष	खेती का क्षेत्र
कॅनडा	१९७१	१८७.६	२००२	२७३.४
अमरिका	१९६९	१५७.६	२००२	१७८.४
ब्राझील	१९७०	५९.४	१९९६	७२.८
पेरु	१९७१-७२	१६.९२	१९९४	२०.१
डेन्मार्क	१९७०	२०.९	२००२	५२.३
फ्रांस	१९७०	६.९	२०००	४५
इटली	१९७०	६.९	२०००	७.६
नेदरलँड	१९७०	११.६	१९९९	२२
नार्वे	१९६९	१७.६	१९९९	८९.५
स्पेन	१९७२	१७.८३	१९९९	२३.९
ऑस्ट्रेलिया	१९७०	१९२०.३	२००१	३२३२.१
भारत	१९७१	२.३	२००१	१.०६
जपान	१९७०	१	२०००	१.२
दक्षिण कोरिया	१९७०	०.८८	२०००	१
चीन	अनुपलब्ध	अनुपलब्ध	१९९७	०.६

---

(१८) क्या उत्तराधिकार कानून में कुछ बदल होना चाहिए?

सतही स्तर पर उत्तराधिकार कानून के कारण भूमि के टुकडे हुए ऐसा दिखता है, लेकिन वास्तविकता यह है की, किसान विरोधी कानूनों के कारण किसानो की क्रयशक्ती कमजोर रही, उसके चलते ना खेती का विकास हो पाया और ना ठीक से औद्योगिकीकरण हुआ। किसानों की बदहाली के चलते नये रोजगारों के अभाव रहा। जीने का दूसरा साधन न होने के कारण, जो भी है उसी के हिस्से करने पडे। आज के जमाने में जमीन मूल्यवान स्थावर जायदाद मानी जाती है। इसलिए उसी का विभाजन हो रहा है।

हाल हाल तक दहेज को लडकी का हिस्सा माना जाता था। लेकिन दहेज के

लिए जानलेवा प्रकार होने लगे। दहेज विरोधी आंदोलन शुरु हुए। दहेज प्रतिबंधक कानून बना। उसके बाद बेटी के हिस्सों का मांग होने लगी। बेटी के हिस्से का कानून बना। दहेज के कारण जमीन के टुकडे होना टलता था। लेकिन अब आप नही टाल सकते। लडकियों को उत्तराधिकार का हक मिलना चाहिए, इस में कोई दो राय नहीं है। लेकिन वह हिस्सा किस तरह देना है, यह संबंधित व्यक्तियों ने तय करना चाहिए।

बेटीयों का हिस्सा यह हाल की बात है। भूमि के टुकडे होने की प्रक्रिया बहुत पहले से चली आ रही है। खेती व्यवसाय को नुकसान में रखा गया इस कारण बाजार का विस्तार नहीं हुआ। खेती के अलावा रोजगार निर्माण नहीं हुए। किसानी के बाहर रोजगार के मौके कम होने से, खेती पर बोझा बढता गया। इसलिए भूमि के टुकडे होते गये। खेती पर निर्भर समाज में उत्तराधिकार कानून इससे अलग नहीं हो सकता।

अलग अलग देश, अलग अलग धर्म, अलग अलग समूह की जायदाद के बंटवारे की पद्धतियाँ, परंपरायें तथा कानून अलग अलग हैं। भूमि के टुकडे ना हो इसके लिए बडे भाई को सारी स्थावर जायदाद देना और छोटे भाईयों की जिम्मेदारी बडे भाई को सौंपना, इस प्रकार की पद्धति किसी जमाने में किसी समुदाय में थी। मृत्युपत्र के आधारपर वारिसों का हिस्सा तय करने की पद्धति आज भी अनेक देशों में प्रचलित है। पुश्तैनी जायदाद और स्व अर्जित जायदाद इस प्रकार का फर्क कर बटवारा करने की पद्धति हमारे यहाँ प्रचलित है।

सामान्यतः वारिस अधिकार में भूमि के समान हिस्से करने की पद्धति विश्व के कई देशों में प्रचलित है। लेकिन प्रगत देशों में रोजगार के अन्य साधन बहुत अधिक मात्रा में उपलब्ध होने के कारण उन्हें भूमि के टुकडे करने की आवश्यकता नहीं पडती।

कुछ देशों में भूमि की मालकी कंपनियों की है। इससे विभाजन टलता है। कुछ देशों में भूमि की मालकी सरकार की है। आफ्रिका के कुछ देशों में सरकार जोताई के लिए भूमि किराये पर देती है। आपको चाहिए उतनी भूमि किराये पर लीजिए। उसपर सिलिंग नहीं है। लेकिन निरंतर पांच साल भूमि को पडति रखा तो सरकार भूमि वापस लेकर दुसरे को किराये पर देती है। भूमि के राष्ट्रीयीकरण की रुस या चीन की पद्धति से यह पद्धति अलग है। विशेष बात यह कि इसमें सिलिंग नहीं है।

हमारे देश में मालकी और वारिस हक का विषय नाजुक एवं संवेदनशील है। लेकिन जिस गति से खेती-भूमि के टुकडे हो रहे है उन्हें देखते हुए, अगली दो-तीन पीढियों में भूमि के इतने छोटे छोटे टुकडे हो जायेंगे कि खेती करना असंभव हो जायेगा। उस समय तो भी मालकी का विचार करना ही पडेगा।

फिलहाल यह बात स्पष्ट है कि, अपने देश में खेती व्यवसाय घाटे में रखने के

लिए तैयार किये गये कानून भूमि के टुकडे करने के लिए कारण बने हैं। उन्हें तुरंत खारिज करना चाहिए। किसानों की कंपनियाँ स्थापन कर भविष्य में होनेवाला विघटन को टालना चाहिए। उत्तराधिकार कानून में बदलाव करने से कहीं ज्यादा आवश्यक बात किसान विरोधी कानून समाप्त करना है।

(१९) आवश्यक वस्तु अधिनियम की पार्श्वभूमि क्या है?

इस कानून का नाम जीवनावश्यक नहीं, आवश्यक वस्तु अधिनियम है। अंग्रेजी में इसेन्शियल कमोडिटीज ॲक्ट कहते है। इसेन्शियल याने आवश्यक। जीवनावश्यक नहीं। इस कानून के संदर्भ में जीवनावश्यक शब्द का प्रयोग करना उचित नही है।

यह कानून १९४६ में ब्रिटिश सरकार द्वारा जारी किये गये एक अध्यादेश से निकला है। १९४५ में दूसरा महायुद्ध हुआ। उस में ब्रिटन की अगुवाई थी। सेना को अन्न की कमी ना हो इसलिए ब्रिटिश सरकारने भारत के लिए यह अध्यादेश जारी किया था। १९४६ में अध्यादेश निकला और १९४७ में अंग्रेज भारत छोडकर चले गये। लेकिन अध्यादेश बना रहा। तत्कालीन अन्नमंत्री रफी अहेमद किडवाई ने इसे खारिज करने के लिए नेहरुजी से अनुरोध किया। लेकिन नेहरुजी के इन्कार करने से यह कायम रहा।

१९५४ को रफी अहेमद किडवाई का देहांत हुआ। फरवरी में एक महत्वपूर्ण संविधान संशोधन किया गया। अपने संविधान के अनुसार १)राज्य २)केंद्र तथा ३)सामायिक इस तरह काम का विभाजन किया गया है। इसकी सूचियाँ परिशिष्ट सात में हैं। कृषी यह विषय राज्य की कक्षा में है। तत्कालीन नेहरु सरकारने सामायिक सूची में से एक अनुच्छेद हटाकर वहाँ पूर्ण नया आलेख जोड दिया। इस नये मसौदे के कारण केंद्र सरकार को कुछ वस्तुओंके नियंत्रण का अधिकार मिला। शुरु में कुछ खनीज, ढोरों का खाद और कुछ कृषि उत्पादनों का (कपास, ज्यूट, रबर) समावेश किया। यह संविधान संशोधन होकर दो महिनों का समय बिता भी नहीं था कि सरकारने इस अध्यादेश का कानून में रुपांतर कर दिया। इस तरह अप्रैल १९५५ को आवश्यक वस्तु अधिनियम अस्तित्व में आया।

(२०) आवश्यक वस्तु कानून में किन वस्तुओं का समावेश किया है?

इस कानून के तहत आज आवश्यक वस्तूओं की सूची में दो हजार से ज्यादा वस्तुओं के नाम दर्ज हैं। सरकार उसकी इच्छा के अनुसार किसी वस्तू को हटाती है या किसी वस्तू को जोडती है, इस लिये वस्तूओं की संख्या घटती या बढती रहती हैं।

आवश्यक वस्तू कानून के तहत वस्तुओं को भिन्न वर्गो में समाविष्ट किया जाता है.

१) ऑईल केक ओर अन्य सभी पशु खाद्य २) कोक, कोयला तथा कोयले से निर्मित अन्य उत्पादन ३) ऑटोमोबाईल के उपकरण तथा उसके पार्टस् और विद्युत उपकरण ४) रुई और वुलन के वस्त्र ५) खाद्य पदार्थ, खाद्य तेल, तेल बिज ६) लोहा और स्टील, लोह और स्टील द्वारा उत्पादित उत्पादने ७) न्यूजप्रिंट, पेपरबोर्ड और स्ट्रॉबोर्ड के साथ कागज ८) पेट्रोलियम तथा पेट्रोलियमजन्य उत्पादन, ९) बिनौले के साथ कपास, जिनींग किया हुआ और न किया हुआ, बिनौले १०) ज्यूट, ज्यूट का कपडा, ज्यूट बीज, ११) कृषि खाद- रासायनिक, सेंद्रीय या मिश्र खाद १२) खाद्यान्य फसल के बीज तथा फल तथा सब्जियों के बीज १३) ढोर, घास बीज.१४) आदी

सरकार समय समय पर आवश्यक वस्तुओं में नई वस्तुओं को जोडती है, और कुछ को हटाती भी है। २००२ में यार्न से तयार होनेवाला धागा, टेक्सटाईल की यंत्र सामग्री, मानव निर्मित या यंत्रनिर्मित सेल्युल्स धागे और कपडे, वुलन आदि १२ वस्तुओं को हटाया गया था। अभी हाल ही में प्याज को हटाया गया। सुनिश्चित कालावधि के लिए दालों को हटाने का आदेश केंद्र सरकारने जारी किया है। कौनसी वस्तू और कब हटायें या जोडें उसका कोई नियम नहीं है।

यह एकमात्र ऐसा कानून है जिसमें 'आवश्यक वस्तु' इस शब्द की व्याख्या ही नहीं है। कानून में कहा गया है कि 'सरकार जो भी तय करेगी' वह आवश्यक वस्तु मानी जायगी। कानून में व्याख्या न होने के कारण सब कुछ सरकार की मर्जी पर निर्भर है। ऐसा यह विचित्र कानून है।

आवश्यक वस्तु अधिनियम १९५५ के संदर्भ में सरकार की ओर से स्पष्ट किया गया उद्देश्य (जो कानून बनाते समय लिखना पडता है) आगे के अनुसार है। किसी भी वस्तु का उत्पादन, वितरण, कीमत और व्यापार पर प्रतिबंध लाना या प्रतिबंधित करने का अधिकार सरकार को मिले यह इस अधिनियम का उद्देश्य है। इसलिए वस्तुओं की आपूर्ति कायम रखना या बढाना, संबंधित उत्पादनों की उचित कीमत के अनुसार समान वितरण और उपलब्ध कराना तथा भारत की सुरक्षा के लिए आवश्यक वस्तुएँ उपलब्ध रहेंगी इसकी व्यवस्था करना और लष्कर के काम में कोई रुकावट न आये इस बात का ध्यान रखना। जहां तक लष्कर की बात है, किसानों को कोई आपत्ती नही है लेकिन यह कानून लष्कर के लिये कब इस्तेमाल हुवा? लष्कर या गरीबों के नाम पर किसानों को लुटने के लिये उसका बारबार इस्तेमाल होता आया है।

(२१) आवश्यक वस्तु कानून से खेती उत्पादनों को हटाया तो?

कुछ लोग आवश्यक वस्तु अधिनियम से खेती उत्पादनों को हटाने की माँग करते है। हाल ही में नीति आयोग ने भी इस प्रकार की सूचना की थी। उन्हें कानून के बारे में शायद पूरी जानकारी नहीं है। सरकार बिच बिच में कुछ वस्तुओं को हटाती है, कुछ समय बाद फिर उनका समावेश करती है। आज कुछ वस्तुओं को हटाने का मतलब यह नही है की वह हमेशा के लिए हटाई गयीं। वह फिरसे लायीं जा सकतीं हैं। इस प्रकार इस कानून का स्वरुप है। इसलिए खेती उत्पादनों को हटाने की मांग करते समय इस अधिनियम के आधारपर कोई भी वस्तु आवश्यक वस्तु के रुप में तय करने के सरकार के अधिकार को हटाने की मांग करनी चाहिए। मतलब यह कानून समाप्त करने की मांग करनी चाहिए।

(२२) आवश्यक वस्तु कानून का किसानों पर क्या परिणाम हुआ?

आवश्यक वस्तु कानून की सबसे अधिक मार खेती उत्पादनों पर अर्थात किसानों पर पडी। अनाज की कीमत निचले स्तर पर रखने पर कारखानदारों को सस्ते मजदूर मिलेंगे। उससे औद्योगिकीकरण की गती बढेगी, यह सरकार की अधिकृत भूमिका थी। उसपर अंमल करने के लिए इस अधिनियम को लागू किया गया।

स्वातंत्रता के बाद शहरों में लोकसंख्या बढती गई। उनके पास पैसा भी आया। उनका राजनीति पर सीधा परिणाम होने लगा। (मतदार संघो की पुनर्रचना के बाद (२००७-८) शहर के मतदारों को अधिक महत्व आया) इस वर्ग को खुश रखना राजनीति के लिए आवश्यक हो गया। प्याज महंगा होने से सत्ता हाथ से जाती है यह ध्यान में आनेपर प्याज की कीमत सस्ती कैसे रहे यही प्रयास होने लगे। चिनी महंगी हुई तो यह वर्ग नाराज होता है। इसलिए उनका समर्थन पाने के लिए चिनी पर बंधन लगाये गये।

आज की पीढी शायद विश्वास न करें लेकिन बहुत पुराने जमाने की बात नहीं है, भारत स्वतंत्र होने के २५ साल बाद १९७०-७२ का कालखण्ड था। उस समय सरकारने किसानों पर लेवी लगायी थी। लेवी का मतलब अनिवार्य वसूली। किसानों को बाजार मूल्य से बहुत कम दामों पर अपना माल सरकार को देना पडता था। किसी किसान के यहाँ फसल अच्छी न हुई हो तो भी उसे किसी दूसरे से महेंगे दामों से माल खरीदकर सरकार को सस्ते दाम पर देना पडता था। यह लेवी की पद्धत कुछ समय पूर्व तक जारी थी।

आवश्यक वस्तु अधिनियम में चिनी के लिए विशेष व्यवस्था की गई थी। चिनी पर लगाई गयी लेवी हटाने में सन २००० तक राह देखनी पडी। चिनी पर लेवी

का मतलब कारखाने में जितनी चिनी का उत्पादन होगा उसमें से लगभग ९० प्रतिशत चिनी सरकार द्वारा तय किये गये दाम पर सरकार को देना अनिवार्य था। उसका परिणाम गन्ने की कीमत पर होता था। अर्थात उसकी मार किसानों पर ही पडती थी।

चिनी, अनाज हो या प्याज, सभी वस्तुएँ केवल राजनीति के कारण नोकरदारों की सुविधा के लिए, शहरी ग्राहकों को खुश रखने के लिए आवश्यक वस्तुओं की सूची में समाविष्ट की गयी। गरीबों के कल्याण का नाम लिया जाता था लेकिन लाभ मात्र अन्यों का होता था। गरीबी निर्मूलन करने के लिये कल्याणकारी योजनाओं की अपेक्षा सर्जकों को स्वातंत्रता देना चाहिए, यह सूत्र शासनकर्ताओं ने कभी स्वीकार नहीं किया।

मार्केट कमिटियों की जननी भी यही कानून है। बाजार समितियों ने किसानों को जकड डाला है। माल बेचना हो तो मार्केट कमिटी के आंगन में आकर ही बेचना होगा। इसके बाहर किया गया सोदा कानून के विरुद्ध माना गया। बाजार समिति के आंगन में मार्केट कमिटी जिनको अनुमति देंगी उसी लायसन्सधारक आडती या खरीददार को ही माल बेचना बंधनकारक किया गया। मार्केट कमिटी किसे लायसन्स देगी? जो उनके अपने है। परवानाधारक व्यापारियों की संख्या बहुत कम और बेचनेवाले किसान हजारों। इसलिए दाम गिराकर व्यापारी माल ले सके। मार्केट कमिटियों ने खेती उत्पादनों के व्यापारियों की संख्या सीमित कर डाली इस कारण किसानों को स्पर्धा का लाभ नहीं मिल सका।

२०१५-१६ में जब दाल के दाम बढने लगे तब महाराष्ट्र सरकारने इसी अधिनियम का शस्त्र के रुप में प्रयोग किया। दालों के संचय पर निर्बंध, माल ढोने पर निर्बंध, इतना ही नहीं तो दालों के दामों पर भी निर्बंध लादे गये। इतने निर्बंध यदि होंगे तो व्यापारी बाजार में क्यों आयेंगे? इन निर्बंधों का असर अगले वर्ष दिखाई दिया। पिछले वर्ष के तुअर (अरहर) के बढते दाम देखकर किसानों ने तुअर की बहुत अधिक फसल ली। पर बाजार में व्यापारी कम आये, उन्होंने दाम गिराये। जहाँ तुअर को दस बारा हजार का दाम मिलता था, वहाँ ३-४ हजार भी मिलना मुश्कील हो गया। अंत में सरकार को खरीदने की तैयारी करनी पडी। सरकारने पिछले वर्ष की अपेक्षा आधे दाम दिये। उसमें भी सरकारी मशिनरी निकम्मी निकली। वर्ष हो गया लेकिन सरकार तुअर खरीद नहीं सकी। किसान बेहाल हो गये। आवश्यक वस्तु अधिनियम का आतंक न दिखाया होता तो किसानों को अच्छे दाम मिलते और किसान तुअर की इतनी फसल पैदा करते कि विदेश से मंगाने की आवश्यकता ही न पडती।

आवश्यक वस्तु कानून का आधार लेकर ही महाराष्ट्र में कपास की 'एकाधिकार

योजना' लायी गई थी। इस योजना ने किसानों का कितना नुकसान किया इसे महाराष्ट्र के विदर्भ-मराठवाडा के किसान अच्छी तरह जानते हैं। पडोसी मध्यप्रदेश में ज्यादा दाम होने पर भी कपास को वहाँ ले जाने पर निर्बंध थे। जागतिक बाजार की कीमत से आधे दाम पर सरकार कपास खरीदती थी। यह योजना किसानों के नामपर शुरु की गई थी लेकिन किसानों को उसका लाभ नहीं मिला। ग्रेडर, अधिकारी तथा चुंगी पर तैनात पुलिस मोटा पैसा कमा कर मजे में रहे। शरद जोशी के नेतृत्व में शेतकरी संघटना के तीव्र आंदोलन के बाद यह योजना बंद की गयी।

बीज भी आवश्यक वस्तु कानून के तहत आते हैं। बाहर से कौनसे बीज मंगाने है, या आने देने हैं, यह सरकार तय कर सकती है। सरकार के इस नियंत्रण से किसानों का भारी नुकसान हुआ है। बीटी कपास १५ वर्षोंसे संसारभर में बोई जा रही थी लेकिन उसे भारत में आने नहीं दिया गया था। कपास के बीटी बीज लुकछुप कर भारत में लाये गये। किसानोंने उसे बोया। आगे चलकर बीटी कपास को मान्यता देनी पडी। बीटी कपास के कारण उत्पादन बढा। किसानों को कुछ लाभ हुआ। लेकिन १५ वर्ष सरकारने बीज रोक कर जो किसानों का नुकसान किया उस की भरपाई किसी ने नहीं की। अब कपास का नया जी.एम. तकनीक सरकारने रोक रखा है। अन्य फसलों के जी.एम्. तकनीक के बिजों के बारे में वही हो रहा है। पडोस के चायना ने सोयाबीन के जी.एम्. तकनीक को हाल में मान्यता दी। लेकिन हमारी सरकारने नहीं दी। चीन में सोयाबीन की फसल बढी और अब हमारे सोयाबीन की निर्यात कमजोर हो गयी। ये नुकसान भी किसानों को ही भुगतना पडेगा। बीज सरकार के नियंत्रण में होने के कारण किसान इस तकनीक का इस्तेमाल नहीं कर सकते। जिस देश में महात्मा गांधीजी ने 'कौनसी फसल लेनी है, यह तय करने का अधिकार किसानों का है' इस बात के लिए देढ सौ वर्ष पूर्व चम्पारण में किसान आंदोलन का नेतृत्व किया था। उस राष्ट्रपिता के देश में आज भी बीज आवश्यक वस्तुओं की सूची में होना, इससे अधिक दुर्दैव कौनसा होगा? शेतकरी संगठन के नेता शरद जोशी ने तकनीकी स्वातंत्र्य की विस्तृत भूमिका रखी और उसके लिए आंदोलन भी किये। इस कानून के कारण किसानों के तकनीकी स्वातंत्रता का हरण किया गया।

कुल मिलाकर आवश्यक वस्तु कानून किसानों के गले का फंदा है। वह सरकारी अधिकारी तथा नेताओं के लिए भष्ट्राचार के द्वार खोल देता है। किसानों के लिये यह काला कानून है।

(२३) आवश्यक वस्तु कानून के अन्य दुष्परिणाम क्या हैं?

इस कानून के तीन बडे दुष्परिणाम हैं। १) खेती उत्पादनों के बाजार में

हस्तक्षेप कर खेती उत्पादनो के दाम गिराना २) ग्रामिण औद्योगिकीकरण में रुकावट करना ३) प्रशासकीय भ्रष्टाचार को मौका देना।

इस कानून ने कृषी उत्पादनों के बाजार को कैसे ध्वस्त किया इसे हमने पिछले प्रश्न के उत्तर में देखा। दूसरे जो दो दुष्परिणाम हैं वह भी महत्वपूर्ण हैं। आवश्यक वस्तु कानून ने बाबुओं के (सरकारी अधिकारी) हाथों में अमर्याद अधिकार दिये हैं। इसी आवश्यक वस्तू कानून में सरकारी अधिकारियों को संरक्षण देने की खास व्यवस्था है। उसका परिणाम यह हुआ कि प्रत्येक उद्योजक को कारखाना शुरु करना हो, या चलाना हो तो हर बार सरकारी अधिकारियों के पैर छूने पडे। चंद्रपुर के उद्योजक को कारखाना शुरु करना हो तो उसकी मान्यता के लिए मुंबई के चक्कर काटने पडते है। बाबुओं को रिश्वत देने के बाद भी आवश्यक प्रमाणपत्र इकठ्ठे करने पडते ही है। इसमें बाबू सुरक्षित रहता है, लेकिन उद्योजक को पापड बेलने पर मजबूर होना पडता है। चक्कर लगाते लगाते और आवश्यक प्रमाणपत्र जुटाते-जुटाते उद्योजक थक कर ढीला पड जाता है। आज पूरे देश में देखिये, राज्यों के राजधानियों के आसपास ही कारखाने विकसित हुऐ दिखेंगे। क्योंकि वहाँ के कारखानदारों को राज्य के वरिष्ठ अधिकारियों के पास चक्कर लगाना आसान होता है। आवश्यक वस्तु कानून से निर्मित लायसन्स, परमीट और कोटा राज के कारण भ्रष्टाचार तो बढा ही, लेकिन उससे ज्यादा भयंकर बात यह हुई कि ग्रामीण इलाकों में उद्योगो के द्वारा जो रोजगार निर्माण हो सकते थे वह नहीं हो सके।

ग्रामीण औद्योगिकीकरण न होने के तीन बडे दुष्परिणाम हुए-

(१) ग्रामीण उद्योजकों की उद्यमशीलता को मौका मार दिया गया

(२) कच्चे माल पर प्रक्रिया करने पर बढनेवाली कीमतों का लाभ किसानों को नहीं मिल सका।

३) किसानों के लडके लडकीयों को उनके इलाकों में रोजगार नहीं मिल सका।

आवश्यक वस्तु कानून ने प्रशासकीय भ्रष्टाचार का मार्ग खुला किया। लायसन्स, परमीट और कोटा पद्धति लागू हुई। उपर से नीचेतक भ्रष्टाचार की श्रृंखला तैयार हुई। इस का लाभ राजनेताओं ने उठाया। बाद मे लाभ पानेवाले ही राजनीति में आये। राजनिती का पुरा चरित्र भ्रष्ट बनाने में इस कानून का बडा योगदान रहा है। इसी कानून ने सरकारी अधिकारियों को भ्रष्टाचार के लिए मुक्तद्वार दिया। भ्रष्टाचार रोकने के लिए किसी लोकपाल की बिल्कुल भी आवश्यकता नहीं है। आवश्यक वस्तु कानून खारिज कीजिए देश के भीतर का ८०% भ्रष्टाचार सहज समाप्त हो जायगा और यदि यह कानून बनाये रखा तो दस क्या सौ लोकपाल भी भ्रष्टाचार खत्म नहीं कर पायेंगे।

कुलमिलाकर आवश्यक वस्तु कानून ने केवल देश का विकास ही नहीं रोका, बल्कि देश को भ्रष्टाचार की खाई में ढकेल दिया।

(२४) इस प्रकार के कानून संसार के किसी देश में हैं क्या?

सेना के लिए आवश्यक अनाज की चिंता सारे देश करते हैं। विकसित देशों में इस कानून की व्याप्ति इससे अधिक नहीं दिखती। भारत में इस कानून की व्याप्ति बहुत अधिक है।

सेना के अनाज की सुरक्षा के नामपर भारतीय किसानों को देशभक्ति की सीख देने की आवश्यकता नहीं है। वह देश की सुरक्षा के लिए अपने जिगर के तुकडे को सरहद पर भेजते हैं। उनके लिए क्या वे अनाज नहीं देंगे? उसके लिए कानून नहीं हुआ तो भी भारतीय किसान अपने देश की सेना की मदद के लिए आनाबानी नहीं करेंगे। सेना का नाम लेकर कोई हमें गुमराह कर रहा हो तो वह कैसे मान्य होगा?

कल्याणकारी या समाजवादी राज्यशैली के मुताबिक गरीबों मात्र नाम लिया जाता है और लाभ नोकरशाही और शासकों को पहुंचाये जाते है आवश्यक वस्तू कानून का काम मात्र यही रहा.

भारत के आवश्यक वस्तु कानून जैसा कानून संसार में अन्यत्र नहीं है। यह कानून १९५५ में बना और आगे इंदिरा गांधी प्रधानमंत्री थी, उस समय १९७६ में उसे संविधान के परिशिष्ट ९ में शामिल किया गया। किसानों के हाथ-पैर बांधकर उसका माल लूटकर ले जाने जैसा यह प्रकार है। यह सरकारी डकैती का कानून है।

(२५) स्वामिनाथन आयोग की सिफारिशों को लागू करने पर क्या किसानों की समस्याएँ खत्म हो जायेंगी?

डॉक्टर ने दी हुई दवा की पर्ची फेंक कर वकील ने लिखी हुई पर्ची से दवा की मांग करना जितना हास्यास्पद है, उतना ही स्वामिनाथन आयोग का 'वह' सुझाव लागू करो कहना हास्यास्पद है।

स्वामिनाथन अर्थतज्ञ नहीं है। वे कृषितज्ञ हैं। वे कृषि का शास्त्र बता सकते हैं। उस क्षेत्र में वे अधिकारी हैं। शरद जोशी अर्थतज्ञ थे। उन्होंने देश में किसान आंदोलन खडा किया। इस संदर्भ में उनका क्या कहना है, यह समझ लेना ज्यादा जरूरी है। शरद जोशी को टालकर स्वामिनाथन आयोग की मांग करना याने डॉक्टर की पर्ची छोडकर वकील ने लिखी पर्ची पर दवा की मांग करना जैसा गहै।

इस आयोग को नकारने के लिए एक ही बात काफी है। यह आयोग किसान विरोधी कानूनों के बारे में खामोश है। किसानों की अर था? या आप उन कानूनों के

समर्थक हैं? समझ में नहीं आता। दूसरे आश्चर्य की बात यह है की, २१ वीं शती में आये इस रिपोर्ट में सरकारीकरण का जोरदार समर्थन किया गया है। सरकारी एकाधिकारशाही सर्जकों के हित में नहीं हो सकती, यह बात अब सारी दुनिया मानती है। सरकारी नियंत्रण कम से कम करने की दिशा में दंनिया कदम उठा रही है और स्वामीनाथन आयोग फिर से सरकारी श्रंखलाओं की शिफारस कर रहे हैं।

उत्पादन खर्च से देढ गुना अधिक दाम देने के सुझाव का आश्वासन यह इस रिपोर्ट की सबसे लोकप्रिय मांग है। स्वामिनाथन आयोग की रिपोर्ट ठीक से पढी तो ध्यान में आयेगा कि देढ गुना अधिक दामों का आश्वासन सभी फसलों के लिए नहीं है। कुछ फसलों के लिए मर्यादित है। उन कुछ फसलों में हमारी गिनती है क्या? उत्पादन खर्च से देढ गुना कम से कम है या अधिकतम? पढेंगे तो पता चलेगा। उसका नाम लेकर धोखा देनेवालों को पढने की आवश्यकता महसूस नहीं होती है। 'अधजल गगरी छलकत जाय' छाप नेता देढ गुना दाम की मांग कर किसानों की दिशाभूल कर रहे हैं।

जिन्होंने इस आयोग की स्थापना की उनके सत्ताकाल में ही यह रिपोर्ट प्रस्तुत किया गया था। जिनके कालखण्ड में यह रिर्पोट बरसों पडा रहा वही काँग्रेस तथा मित्र दल के लोग आज सत्ता से बाहर होने पर इस आयोग की शिफारशें लागू करने की मांग कर रहे हैं। यह केवल हास्यास्पद न होकर संतापजनक भी है। २०१४ के चुनाव के समय स्वामिनाथन आयोग की सिफारिश का नाम लेकर भाजपा ने, विशेषतः नरेंद्र मोदीने किसानों को बहकाया। सत्ता मिलते ही मुकर गये। गुजरात के चुनाव के बाद फिरसे वह किसानों की दिशाभूल करने में जुट गये हैं। अब उसी आयोग के नाम से वामपंथी तथा अन्य विरोधक फिरसे किसानों को धोखा देने निकले है।

मान लो देढ गुना दाम देना तय हुआ। दाम कौन देगा? खरेदी कौन करेगा? अर्थात सरकार! मतलब देश में उत्पादित होनेवाला सारा माल सरकार खरेदेगी। (सारे व्यापारी इस व्यवहार से बाहर कर दिये जायेंगे। तो भी उनका कुछ बिगडनेवाला नहीं है। वे स्थल बदल सकते है, धंदा बदल सकते है। किसान न तो स्थान बदल सकता हैऔर ना ही धंदा।) सरकार द्वारा खरीदी आवश्यक होगी। उसे दुसरा स्पर्धक नहीं रहेगा। (हाल ही में तुअर की सरकारी खरीदी का कडवा अनुभव महाराष्ट्र के किसानों ने लिया है। कपास के एकाधिकार योजना के कटु अनुभव इसके पहले लियें हैं।) देश के संपूर्ण कृषी उत्पादनों को निर्धारित मूल्य पर खरीदनेवाला संसार में एक तो भी देश है क्या? कम्युनिस्ट देशों में ऐसी खरीदी होती है क्या? संसार के किसी भी देश को सभी किसानों का संपूर्ण माल खरेदना केवल असंभव है। यह असंभव होते हुए इस प्रकार की माँग को बार बार करना किसानों को धोखा देने जैसा नहीं है क्या?

भारत में होनेवाली संपूर्ण फसलों का माल सरकार को खरीदना हो तो भारत

का सारा बजेट भी कम पडेगा। अनेक देशों के बजेट एक करने होंगे। जिसे अर्थशास्त्र की समझ नहीं है, वही नेता इस सिफारिश का समर्थन करे यह तो बात समझ में आती है लेकिन अच्छे खासे जानकार लोग भी उसी मांग को लेकर निकलें है तो समझ लिजिये इन का मकसद कुछ अलग है।

निर्धारित मूल्य घोषित करने का अधिकार राज्य सरकारों को नही है। यह काम केंद्र सरकार करती है। दामों की सिफारिश करनेवाला एक आयोग है। कृषिमूल्य आयोग। यह आयोग कृषि विश्वविद्यालय तथा अन्य शासकीय व्यवस्थाओं द्वारा उत्पादन खर्च का हिसाब इकठ्ठा कर उसके आधार पर सिफरिश करता है। कृषी मूल्य आयोग उत्पदन खर्च तय करने के लिए रँडम तरिके का इस्तेमाल करता है, जब की आदर्श (मॉडेल) पद्धती का इस्तेमाल करना आसान और सही है। स्वामीनाथन आयोग इस बारे में चुप है। केंद्र सरकार चुनिंदा १७ उत्पादनों के दाम घोषित करती है। सभी खेती उत्पादनों के नहीं। सभी किसानों का उत्पादन खर्च एक समान नहीं होता है। प्रत्येक क्षेत्र का अलग हो सकता है। सरकार औसत (रँडम) पद्धति का उपयोग करती है। इस पद्धति में अनेक दोष है। आज तक सभी सरकारों ने कृषि मूल्य आयोग का उपयोग दाम कम रखने के लिए ही किया है। स्वमीनाथन आयोग उत्पादन खर्च का हिसाब कैसे करे इस बारे में मौन रखता है और देढ गुना भाव की शिफारिश करता है, यह कसाई के यहाँ भेजी गई गाय को शुभेच्छा देने जैसा है।

कृषी उत्पादनों के बाजार से व्यापारियों को बाहर कर उनके स्थान पर सरकारी अधिकारीयों को लाना भीषण संकट को आमंत्रण देना है। सरकारी नोकर को वेतन से मतलब होता है। उसे खेती उत्पादनों के क्रय-विक्रय में रुचि होने को कोई कारण नहीं। व्यापारी को रुचि लेनी पडती है। नफा कमाने की प्रेरणा से वह पूँजी लगाता है। लगाई गई पूँजी कम से कम समय में वापस पाने के लिये उसे अपनी क्षमता का पूर्ण इस्तेमाल करना पडता है। इस लिए वह उतनीही गति से माल बेचने की व्यवस्था करता है। इसके बाद ही उसे नई खरीद के लिए पूँजी लगाना संभव होता है। महिने का वेतन लेनेवाला नोकर इतनी झंझट क्यों करेगा?

जीवशास्त्र में पेशी से शरीर तक की उत्क्रांति हुई है ऐसा माना जाता है। उसी प्रकार समाजशास्त्र में व्यक्ति, टोली, परिवार के विकास क्रम को मान्यता उसी प्रकार से मानवी उत्क्रांति में बाजार का महत्व है। बाजार मनुष्य उत्क्रांति की उन्नत अवस्था है। याचना और लूट नकार कर सम्मान से व्यवहार करने की बाजार जगह है। सरकार, ठेकेदार, गुंडे, भ्रष्टाचारी नेता, नोकर ऐसी अनेक इकाइयाँ अर्थात याचक और लुटेरे बाजार की नैसर्गिक क्रिया में बाधा उत्पन्न करतें हैं। बाजार अपने कब्जे में करने की अपेक्षा सरकार को चाहिए की वह बाजार में कोई बाधा न आये इसके लिए सतर्क रहे।

जो लोग सरकारी खरेदी का आग्रह कर रहे हैं, वह बाजार की उत्क्राती को ध्वस्त करना चाहते हैं। किसान के लिए बाजार आवश्यक है, क्यों की वह उत्पादक है. उसे अपना माल बेचना है। खरीददार अनेक होंगे तब उसका फायदा हो सकेगा। यदी बाजार में सरकारी बाबूओं का एकाधिकार रहा तो किसान का शोषण करना और आसान हो जायगा। जिन्हें किसानों को सरकार के अधीन रखना है और जिन्होंने खेत-भूमि के राष्ट्रीयकरण का पुरस्कार किया था, वे इस सिफारिश को हवा दे रहे हैं।

किसानों का और खेती का मूल प्रश्न किसान विरोधी कानून में अटका है। सिलिंग, आवश्यक वस्तु तथा भूमि अधिग्रहण यह तीन कानून किसानों के गले का फंदा बने हुए है। उन्हें खारिज करने की मांग को नजरअंदाज कर किसानों को देढ गुना दाम देने का लालच दिखाना उनको गुमराह करना है।

सरकारीकरण में किसानों का कल्याण न होकर किसानों के पैरों में बांधी गयी श्रृंखलाएँ तोडने में है। इसलिए स्वामिनाथन आयोग की सिफारिश का समर्थन करना गलत है।

(२६) भूमि अधिग्रहण कानून की पार्श्वभूमि क्या है?

सन १८९४ में पहिली बार अंग्रेजों ने भूमि अधिग्रहण कानून लागू किया। वह अत्यंत क्रूर था। जिसकी भूमि अधिग्रहित करनी है उसे केवल एक नोटीस देना काफी था। अधिग्रहण को कोई रोक नहीं सकता था। १९४७ में अपना देश स्वतंत्र हुआ। यह कानून वैसे के वैसे कायम रखा गया। नेहरुजी के कालखण्ड में यह कानून बदलने के बजाय परिच्छेद १८ तथा ३१ में कुछ बदलकर भूमिअधिग्रहण का अनिर्बंध अधिकार सरकारने अपने हाथों में ले लिया। तात्कालीन सरकारने कानून नहीं बदला मात्र संविधान में संशोघन किया।

भूमी संपादन का मामला सर्वोच्च न्यायालय में पहुंचा। १९५१ में शंकरीप्रसाद केस में सर्वोच्च न्यायालयने सरकार के भूमिअधिग्रहण के अधिकार को वैध ठहराया। लेकिन १९६७ में गोलखनाथ विरुद्ध भारत सरकार केस में सर्वोच्च न्यायालयने सरकार के विरुद्ध निर्णय दिया तथा संविधान ने भारतीय नागरिकों को दिये हुए मूलभूत अधिकारों में फेरफार करने का, उल्लंघन करने का सरकार को अधिकार नहीं है, ऐसा कहा। इसके बाद १९७३ में केशवानंद भारती केस में सर्वोच्च न्यायालयने अपने पूर्व के निर्णय को बदलकर सरकार को अनिर्बंध अधिकारों का रास्ता खुला कर दिया।

केशवानंद भारती केस के निर्णय के संदर्भ में कई विचारकों ने तत्कालीन सरकार के हस्तक्षेप पर जोरदार टीका की थी। तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने न्यायाधीशों की नियुक्ति में हस्तक्षेप किया था। इस निर्णय ने भूमि अधिग्रहण करने के

लिए सरकार का विरोध नहीं किया जा सकता, उसमें न्यायालय हस्तक्षेप नहीं कर सकता लेकिन अपनी क्षतिपूर्ति के मुआवजे के लिए पिडीत व्यक्ती न्यायालय में जा सकता है, इस प्रकार का निर्णय दिया। गोलकनाथ केस में जो हासिल हुआ था वह केशवानंद भारती केस में हरण किया गया।

१९७३ के निर्णय के बाद इंदिरा गांधी सरकारने, अनुच्छेद १३ नुसार मूलभूत अधिकारों जो सुरक्षा कवच था वो भी हटा दिया।

जनता पार्टी की सरकारने अंतिम कील ठोकी। मोरारजी देसाई प्रधानमंत्री तथा ॲडव्होकेट शांतिभूषण कानून मंत्री थे। जनता पार्टी सरकारने मूलभूत अधिकारों की सूची से जायदाद के अधिकार को ही निकाल डाला और उसे केवल संवैधानिक अधिकार (३००(अ)) रखा। इसका अर्थ यह है कि जो मूलभूत अधिकार संविधान की आत्मा माने जाते थे, उनपर ही आघात किया गया। अब जायदाद के संदर्भ में सरकारने बनाये कानूनों के विरोध में सर्वोच्च न्यायालय में केस दर्ज नहीं की जा सकती है।

जमीन अधिग्रहन के मामले में सभी सरकारें आक्रमक रहीं। सरकारने नागरिकों के मूलभूत अधिकारों के साथ खिलवाड किया. जायदाद का मूलभूत अधिकार खत्म किया गया। इस में सभी दलों के नेताओं का हात रहा।

(२७) युपीए और एनडीए सरकारों ने भूमि अधिग्रहण कानून में किये हुए संशोधन किसानों के पक्ष में है क्या?

एक मिसाल दे कर समझाता हूं। मुर्गी पालन करनेवाला एक व्यक्ती अपने आप को बडा प्रजातंत्रवादी कहलवाता था। एक दिन वह मुर्गियों के पास गया। ८-१० मुर्गियाँ थी। मुर्गी पालक मुर्गियों से बोला, 'कल मै तुम्हे काटनेवाला हूँ। पर मैं प्रजातंत्रवादी होने के कारण तुम्हें पूछने के लिए आया हूँ कि तुम्हें कौन से तेल में तलना है, जो तुम बताओगे उसके अनुसार ठीक व्यवस्था करुँगा। ठीक सोचकर कल बताया तो भी चलेगा।' इतना कहकर वह चला गया। मुर्गियाँ बडी खुश हुईं। हमारा नसीब कितना अच्छा है कि इतना अच्छा मालिक हमें मिला। एक दूसरे को बताने लगीं। एक मुर्गी चुपचाप खडी देख थी। सभी का ध्यान उसकी ओर गया। उन्होंने उसकी उदासी का कारण पूँछा। तब वह मुर्गी बोली, 'इसमें खुश होने जैसी क्या बात है? वह क्रुर मालिक काहें का प्रजातंत्रवादी? उसने पहलेही हमें कांटने का तय किया है। अब कौन से तेल में तलना है, यह पूछ रहा है। काटना की नहीं, यह नही पूछ रहा है।' यह सुनकर बाकी मुर्गियों की आँखे खुल गई।

भूमि अधिग्रहण के संदर्भ में युपीए और एनडीए सरकारों के प्रस्ताव मुर्गी

पालक जैसे ही हैं। भूमि अधिग्रहण करना की नहीं, हम तय करेंगे। मुआवजा चार गुना-आठ गुना देंगे। काटने का दोनों ने तय किया है। केवल कौनसे तेल में तलना, इतना ही फर्क है।

साम्राज्यवादी शासन ने अपने उपनिवेश के लिए बनाया हुआ वह कानून। देश स्वतंत्रता के बाद जैसा का तैसा कायम रहा। इस काल में स्वतंत्र भारत का संविधान लागू हुआ। भूमि अधिग्रहण कानून विसंगत है यह जानकर भी सरकारने उसमें बदल नहीं किया, संविधान में संशोधन किये।

१८९४ के इस कानून का पुनर्विचार करने के लिए पूरे १०४ वर्षों के बाद याने १९९८ में (आजादी के ५१ वर्ष बाद) संसद का एक अध्ययन गट नियुक्त किया गया। उसके ९ वर्ष बाद २००७ में 'भूमि अधिग्रहण कानून २००७' इस नाम से संसद में बिल प्रस्तुत किया गया। यह बिल संसद में पास हुआ लेकिन राज्यसभा में अटक गया। २०११ में नया बिल कुछ सुधार कर नये नाम से (भूमि अधिग्रहण पुनर्वसन तथा पुनःनिवासीकरण कानून) प्रस्तुत किया गया। अंततः २०१३ में (भूमि अधिग्रहण, पुनर्वसन, पुनःनिवासीकरण, न्याय मुआवजा और पारदर्शकता का अधिकार) इस लंबे नाम के साथ यह कानून पास हुआ। इस कानून की आलोचना हुई। विशेषकर उद्योग क्षेत्र के बडे लोगों ने आक्षेप लिये। इसलिए ३१ दिसंबर २०१४ को मनमोहन सरकारने एक अध्यादेश जारी किया। युपीए सरकार गई। कुछ दिनों में एनडीए सरकार आयी। उन्होंने उसमें कुछ मामूली बदल किये। वे भी राज्यसभा में अटके। इसलिए इस सरकार को भी अध्यादेश निकालना पडा।

इन दो कानूनों में मामूली फर्क है। युपीए सरकारने संमति के संदर्भ में एक शर्त रखी थी उसे एनडीए सरकारने हटाया तथा मुआवजा बढा दिया, इतना ही। तेल में बदल करने से क्या फायदा? सवाल तो काटना है या नही यह है।

(२८) भूमि अधिग्रहण कानून पर क्या आक्षेप और सूचनाएँ है?

भूमि अधिग्रहण कानून किसानों के लिए खतरनाक है। सरकार को कौनसी जमीन लेने की इच्छा होगी, इसका अंदाज नही किया जा सकता। ऐसी अनिश्चित परिस्थिति में किसान अपना व्यवसाय कैसे कर पायेंगे? ऐसी अनिश्चित परिस्थिति होने पर खेती में कौन पूँजी लगायेगा? किसान निश्चिंत होकर व्यवसाय कर सके और पूँजी लगानेवाले का उत्साह बढे इसमें यह कानून रुकावट डालता है।

सही तो ये होता की देश के दो-चार या कुछ अधिक बंजर क्षेत्रों को निर्देशित कर आरक्षित किया जाता और उसी क्षेत्र पर संरक्षण तथा अन्य प्रकल्प खडे किये

जाते। यहां वहां की जमिने अधिग्रहित करने की जरूरतही नही पडती। और किसान निश्चिंत हो कर खेती करते। इस पर भी जिन कारखानदारों को अपने निजी प्रकल्प किसी क्षेत्र में करने हो तो वह सीधे किसानों से बात करते। दुनिया भर के अनेक देशों में इसी प्रकार से औद्योगिकीकरण होता आया है।

हमारे यहां किसानों की जमीन अधिग्रहित करके निजी कारखानदारों को या अन्य संस्थाओं को देना इस प्रकार इस कानून का दुरुपयोग होता आया है। मामूली मुआवजा देकर भूमि अधिग्रहित करना और ज्यादा दाम लेकर कारखानदारों को बेचना। इन व्यवहारों में अपनी मुठ्ठी गरम कर लेना, ऐसी घटनाएँ बार बार हुई हैं।

किसानों से भूमि अधिग्रहित कर भारत में जितने पैमाने पर कारखानदारों को दी गयी, उतनी संसार के अन्य किसी देश में दी गई हो, ऐसा नहीं लगता। सर्व प्रथम चायना में स्पेशल इकॉनॉमिक झोन (सेझ) तयार हुआ। उस समय वहाँ भूमि का अधिग्रहण नहीं किया गया। उन्होंने एक प्रादेशिक विभाग को स्पेशल इकॉनॉमिक झोन का दर्जा दिया। उस प्रदेश से सरकारी हस्तक्षेप हटा दिया। वहाँ भूमि के व्यवहार सीधे किसान और कारखानदारों ने किये। पर जब भारत में सेझ निर्माण किये गये तब सबसे पहले भूमि अधिग्रहित की गई। वह कारखानदारों को दी गयी। उसमें से कुछ जगह कारखाने खडे नहीं हुए। वहां के कारखानदार उस भूमि को रियल इस्टेट के रुप में विकसित करने की अनुमति मांग रहे हैं। भूमि अधिग्रहण कानून नेता, अधिकारी और कारखानदारों के फायदे के लिए है। किसानों के नहीं।

इस संदर्भ में कुछ सूचनाएँ इस प्रकार -

१) निजी उद्योग-व्यवसाय या अन्य संस्थाओं के लिए किसानों की भूमि का अधिग्रहण सरकार द्वारा नहीं होना चाहिए। खेती व्यवसाय करनेवाले और अन्य व्यावसायिक सीधे व्यवहार करें। किसानों से सरकार द्वारा जमीन लेकर अन्य व्यावसायिकों को देनेपर पुरी तरह से रोक लगनी चाहिए।

२) शासकीय (सार्वजनिक) कारणों के लिए (जैसे रास्ते आदि) यदी जमीन लेनी हो तो सरकार को चाहिए कि वह सीधे किसानों से बात कर दाम तय करे। पुनर्वसन की व्यवस्था हो।

३) सरकारी (सार्वजनिक) कारणों के लिए अधिग्रहित जमीन अन्य कारणों के लिए इस्तेमाल करनी हो तो अधिग्रहण प्रक्रिया फिर से करनी चाहिए। जमीन के दाम का फर्क किसानों को मिलना चाहिए।

४) सरकारी (सार्वजनिक) कारण और अधिग्रहण क्षेत्र इनकी योग्यता अयोग्यता का निर्णय करने का अधिकार न्यायालयों को होना चाहिए। निर्णय के लिए कालमर्यादा

का बंधन डाला जा सकता है।

५) मुआवजे के विविध विकल्प खुले होने चाहिए। जैसे मालकी में हिस्सा, पुनर्वसन, किश्तों में रकम, स्वतंत्र कंपनी स्थापना कर मुनाफे का मौका आदि।

(२९) भारत का संविधान बदलना चाहिए क्या?

नहीं, बिल्कुल नहीं। कृषी के संदर्भ में हमारे संविधान कर्ताओं ने जिस मूल स्वरुप में संविधान दिया था उस मूल रुप में संविधान प्रस्थापित होना चाहिए। मूलभूत अधिकारों को लेकर संविधान में जो संशोधन किये गये हैं और जिनके कारण किसानों को गुलाम बना दिया गया उन्हें तुरंत खारिज करना चाहिए। भारत का मूल संविधान व्यक्ति स्वातंत्र्यपर आधारित है। वह वैसा ही प्रस्थापित होना चाहिए। मूल संविधान को बदलने की आवश्यकता नही है

(३०) किसान विरोधी कानूनों के लिए निश्चित कौन जिम्मेदार है?

सिलिंग हटाया तो जमीन का बाजार खुल जायगा। जिसे खेती छोडनी है वह खेती बेचकर पूँजी लेकर बाहर निकलेगा। जिसे अच्छी किसानी करनी है वह जितनी चाहे उतनी भूमि पर अपनी इच्छा और पद्धति से खेती करेगा। किसानी जबरदस्ती का विषय न रहते चयन का विषय होगा। हमने आवश्यक बस्तू कानून हटाने की बात कही है। ता कि सरकारी हस्तक्षेप के कारण बाजार भाव नहीं गिरे।

यह सब जानते हुए भी कुछ लोग जान-बूझकर सिलिंग कानून को हटाने का विरोध करते हैं। ये लोग बुद्धि-भेद करते हैं। ये कौन लोग हैं? थोडा ध्यानपूर्वक देखा तो समझ में आयेगा कि आकर्षक वेतनवाले, सुरक्षित नोकरी करनेवाले, तथाकथित बुद्धिजीवि हैं। हमारा उन्हें आवाहन है कि दो एकड जिरायत (असिंचित) भूमि में दो वर्ष खेती कर अपना जीवन यापन कर दिखायें, तभी सिलिंग कानून हटाने का विरोध करें। चाहिए तो हम उन्हें दो एकड भूमि उपलब्ध करा देंगे।

देहात के लोग मेहनत कर हमारे लिए अनाज, साग-सब्जी, फल आदि की फसल उगाते रहें। जहाँ तक हो हमें मुफ्त में मिलें, नहीं तो सस्ती मिले। लेकिन उन्होंने किसानी नहीं छोडनी चाहिए। उन्हें देहात में ही जीना है, या मरना है। वे किसानी छोड शहरों में आकर दूसरा धंदा करने लगे तो हमारे सुख-चैन में हिस्सेदार बनेंगे। हमारे सुख का हरण होगा, इसलिए उन्हें किसानी में ही जकडकर रखे। इस प्रकार की कुटिल एवं धूर्त मानसिकता के लोग किसान विरोधी कानूनों को खारिज करने का विरोध करते हैं। उसके लिए काल्पनिक डर दिखाते हैं। इन लोगों के लिए राजकीय दल काम करते है। पूँजीवादी हो या वाममार्गी, पुरोगामी हो या प्रतिगामी सभी ने किसानों का मनोबल

तोडने में हात बटाया है।

नरेंद्र मोदी प्रधानमंत्री हुए तब उन्होंने कहा था कि मुझे रोज एक कानून खारिज करना है। विधि मंत्रालयाने एक सूची तैयार की। वह सूची मृत कानूनों की थी। जो कानून आज निरर्थक हैं ऐसे सन १८५७ के कानूनों की वह सूची थी। उन्हें खारिज किया गया। मृत कानूनों को दफन किया। कोई ऐतराज नहीं। पर जिन कानूनों के कारण किसानों को आत्महत्या करनी पड रही है, उनका क्या? उन कानूनों को नरेंद्र मोदीने आज तक स्पर्श भी नहीं किया है। यूँ तो उठते बैठते काँग्रेस को दोष देनेवाली यह भाजपा सरकार, काँग्रेस ने बनाये किसान विरोधी कानूनों को खारिज करने का साहस नहीं जुटा पायी। इतना ही नही, आवश्यक वस्तू कानून का प्रयोग करके लाखो करोडो रुपयों की कृषी माल की आयात की गयी. देशांतर्गत इन कानूनों का किसानविरोधी इस्तेमाल किया गया. लाखों किसानों ने आत्महत्या की है किन्तु संसद में उन्हे श्रद्धांजली देने के लिए दो मिनीट का समय तक नही निकाला गया। किसानों के प्रति सभी राजनैतिक दलों में संवेदना का अभाव दिखता है।

काँग्रेस ने किसान विरोधी कानून बनाये। वामपंथियोंने उनकी साथ दी। आज भाजपा की सरकार उन्हीं कानूनों पर अंमल कर रहे है। किसानों की दृष्टि से सभी सत्ताधारी या उनके समर्थक जिम्मेदार हैं। किसानों की हत्याओं के गुनहगार हैं। किसी का भी पक्ष नहीं लिया जा सकता। किसान विरोधी कानूनों के निर्माते, समर्थक और अंमल करनेवाले इन तीनों से होशियार रहना चाहिए।

(३१) किसान विरोधी कानूनों के विरोध में न्यायालय में क्यों नहीं जाते?

ये कानून संविधान के परिशिष्ट ९ में समाविष्ट है। इसका मतलब उनके विरोध में न्यायालय में याचिका नहीं की जा सकती। जो कानून परिशिष्ट ९ में है उनके विरोध में याचिका नहीं हो सकती। यदि याचिका की जा सकती तो इस देश के संवेदनशील लोग, किसान आंदोलन के नेताओं ने याचिका नहीं की होती क्या? शासन व्यवस्था ने इस प्रकार का मौका ही नहीं रखा। यही तो समस्या है।

उच्च न्यायालयमें वकालत करनेवाले एक कार्यकर्ता वकील ने सर्वोच्च न्यायालय में याचिका करने की पूरी तैयारी की थी। सलाह लेने के लिए वह सर्वोच्च न्यायालय में काम करनेवाले एक ज्येष्ठ सहकारी के पास गया। उस ज्येष्ठ सहकारी ने इस वकील से कहा कि, याचिका करते समय जेब में ५० हजार रुपये ले जाना। कार्यकर्ता वकील ने पूछा, क्यो? तब ज्येष्ठ वकील बोले, यह याचिका स्वीकृत नहीं होगी। शायद कोई दण्ड करे तो भरने के लिए आपके पास पैसे होने चाहिए। कहने का मतलब इतनाही कि

इन कानूनों के विरोध में सर्वोच्च न्यायालय में याचिका नहीं की जा सकती।

कानून में आवश्यक वस्तु की व्याख्या नहीं दी गयी आदि मुद्दों पर न्यायालय के दरवाजे पर दस्तक दी जा सकती है। लेकिन उससे कानून खारिज होंगे ही इसकी निश्चिती नहीं दी जा सकती। परिशिष्ट ९ में ये कानून समाविष्ट नहीं होते तो न्यायालय में उनका विरोध किया जा सकता था। न्यायालयों के दरवाजे बंद होने से इतने वर्ष होने पर भी ये कानून कायम है।

हाल में सुप्रिम कोर्ट का एक फैसला आया है जिस के अनुसार ९ वे परिशिष्ट के कानूनों पर सर्वोच्च न्यायालय विचार कर सकता है. लेकिन २४ एप्रिल १९७३ के पहेले के कानूनों को सुप्रीम कोर्ट के दायरे के बाहर रखा है। यह तारीख केशवानंद भारती केस के फैसले की है. उस के बाद के कानूनों पर ही छूट मिली है। यद्यपी आवश्यक वस्तू कानून-१९५५ को १९८० के बाद ९वे परिशिष्ट में जोडा गया है (याने ७३ के बाद) लेकिन उसे भी पूर्वलक्षी प्रभाव से समाविष्ट किया गया है. सिलींग का कानून ७३ से पहेले का है। अतः इस फैसले का बहुत कम उपयोग हो सकता है.

कोल्हापूर जिले से आकर पूना में बसे किसानपुत्र मकरंद डोइजड ने १६ मार्च २०१८ को संविधान के अनुच्छेद ३१ बी के विरोध में सर्वोच्च न्यायालय में एक याचिका (डी.नं. १०६६८/२०१८) दाखिल की है. इसी अनुच्छेद द्वारा संविधान में परिशिष्ट ९ जोडा गया है. जिस में किसान विरोधी कानून रखे गये हैं। यह याचिका यदि सफल होती है तो किसानों की आजादी का मार्ग खुल जायेगा.

मकरंदने निम्नलिखित मुद्दे उठायें है...

१) परिशिष्ट ९ में समाविष्ट कानूनों के विरोध में न्यायालय में अपिल नही कि जा सकती है. लेकिन जिस संविधान दुरुस्ती के अनुच्छेद द्वारा यह परिशिष्ट आया है, उस ३१ बी के विरोध में तो सुप्रिम कोर्ट में जाया जा सकता हैं.

२) जब संपत्ती का अधिकार मौलिक अधिकार था, तब ९ वे परिशिष्ट का कुछ औचित्य माना जा सकता था. अब जब संपत्ती का अधिकार मौलिक अधिकार नही रहा, तब ३१ बी का औचित्य क्या है?

३) अनुच्छेद ३१ बी ने अनुच्छेद ३२ के अधिकारों पर अतिक्रमण किया है, ३२ में न्यायालय के अधिकारों की बात की गयी है. बाबासाहेब आंबेडकरने अनुच्छेद ३२ को संविधान का आत्मा बताया था.

जितना और जहां संभव होगा, हम उस मार्ग से जाकर किसानों की स्वतंत्रता के लिये जरूर कोशिश करेंगे।

इन कानूनों से मुक्ति पाने के लिए संसद एवं विधिसभा में निर्णय किया जा सकता है। सत्ता में जो बैठे है वे चाहे तो ये कानून खारिज कर सकते हैं। जन आंदोलनों

के द्वारा उनपर दबाव डालना पडेगा। यह एक रास्ता हमारे पास है। किसानपुत्रों को ये काम करना होगा।

बदलती हुई परिस्थिति और आंतरराष्ट्रीय दबाव के कारण भी सरकार को ये कानून खारिज करने पड सकते है।

(३२) ये कानून खारिज करने के लिए किसानपुत्र आंदोलन की क्या भूमिका है ?

एक एकड से कम भूमिधारण करनेवाले किसानों की संख्या ४०% है और ९१% किसान अल्पभूधारक है। इनके सामने, जिये कैसे? यह प्रश्न है। किसानों की ९०% से अधिक आत्महत्याएँ इसी समूह से होती है।

किसानों को सुख एवं सम्मान से जीना हो तो सरकारी नोकरी के चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी को जितना वेतन मिलता है कम से कम उतना, १८ हजार प्रतिमास अर्थात एक वर्ष में २ लाख १६ हजार रुपये नफा होना चाहिए। ऐसी कौनसी फसल है कि अल्पभूधारक को एक वर्ष में २ लाख १६ हजार केवल मुनाफा देगी। बिना सिंचाई के क्षेत्र में कोई संभावना नहीं है। संसार के अत्याधुनिक तकनिक का इस्तेमाल कर सर्वाधिक उत्पादन किया तथा उसे उत्पादन खर्च से देढ गुना या दुगना दाम दिया तो भी किसान २ लाख रुपये नहीं बचा सकता। अधिकतर किसान आज विकल्प नहीं है इसलिए किसानी करते हैं। किसानी छोडकर जीवन यापन कर सके इतनी उनके पास पूँजी है न पूँजी के सिवा दूसरे किसी रोजगार का मौका है। अतः उन्हें खेत में बेगारी करने के अलावा कोई दुसरा रास्ता नही है।

हमारे समाज में अपनी पसंद के अनुसार रोजगार क्षेत्र का चयन करना कठिन है। किसानों को तो बिल्कुल नहीं। स्वामिनाथन आयोग का कहना है कि ४०% किसान बिना विलंब किसानी छोडने को तैयार है। इसका मतलब इतना ही है कि लगभग आधे लोग अनिच्छा से किसानी कर रहे हैं। जिन्हें किसानी करने की इच्छा है, उन्हें अपनी मर्जीनुसार किसानी करने नहीं दी जाती और जिन्हें किसानी करनी नहीं है उन्हें जबरदस्ती किसानी करने को बाध्य किया जाता है।

सिलिंग के कानून से खेत-भूमि क्षेत्र मर्यादित हुआ। किसानी के बाहर रोजगार निर्माण नहीं हुए। भूमि के टुकडे होते गये। जिस ४० एकड भूमि पर एक परिवार अपना जीवन जीता था आज तिसरी पीढी में उसी ४० एकड भूमिपर सोलह परिवारों को जीवन जीना पड रहा है। दारिद्र्य का यह भयानक रुप है।

सिलिंग के कानून ने जिस तरह किसानों को तहसनहस कर दिया उसी प्रकार भूमि अधिग्रहण और आवश्यक वस्तु कानून ने किया। भूमि अधिग्रहण के लिए उन्होंने

संविधान के मूलभूत अधिकारों में से जायदाद के अधिकार को खारिज कर दिया। आवश्यक वस्तु कानून ने सरकार को बाजार में हस्तक्षेप करने का अधिकार दिया और दाम गिराये गये। राजनीति के लोग और नोकरदारों को भ्रष्टाचार का रास्ता खुला कर दिया। इतना ही नहीं तो ग्रामीण औद्योगीकीकरण नहीं होगा इसकी व्यवस्था की। आवश्यक वस्तु कानूनने खेती उत्पादनों पर प्रक्रिया करनेवाले ग्रामीण उद्योगों में रुकावटे पैदा की।

पिछले सत्तर वर्षों के अनुभव से यह सिद्ध हुआ है की, यह किसान विरोधी कानून बनाये रख कर किसानों के कल्याण के लिए कितनी भी अच्छी योजनाएँ बनायी जाये तो भी वह सारी निरर्थक होंगी।

सन १९९० में अपने देशने जिस आर्थिक उदारीकरण नीति को स्वीकार किया उसे कृषिक्षेत्र के लिए लागू नहीं किया। इसलिए कृषि विकास नहीं हो सका। इसके उलटे इस क्षेत्र की अवस्था अधिक बिकट हुई। 'इंडिया' ने आर्थिक उदारीकरण का लाभ उठाया। 'भारत' में आर्थिक उदारीकरण हुआ ही नहीं। ये तीन कानून इस बात का पक्का सबूत है।

सिलिंग, आवश्यक वस्तु तथा भूमि अधिग्रहण ये तीन कानून किसानों के गले का फंदा है। किसान विरोधी कानूनों को खारिज करने के लिए किसानपुत्र आंदोलन शुरु हुआ है।

(३३) किसानपुत्र ही क्यों?

१९८० के दशक में शेतकरी संघटना के आंदोलन में गांव गांव घुमते हुए लगता था की, किसान जागेंगे और सत्ताधीशों को भगा देंगे। लेकिन अब वह परिस्थिति नहीं रही। खेतीपर निर्भर बहुसंख्य किसान थक-हार कर गलितगात्र हो गये हैं। उनमें लडने की ताकत नहीं बची। लाख-लाख किसान आत्महत्या कर रहे हैं। पिछली सरकार क्रुर थी, वह बदली। नई सरकार पुरानी सरकार का ही अनुकरण कर रही है। किसानों का पक्ष लेकर अडिग रुप से खडा रहेगा, ऐसा कोई नेता दिखता नहीं है। जो भी आता है वह किसानों को लूटना चाहता है। शरद जोशी जैसा प्रतिभासंपन्न, अध्ययनशील किसान नेता नही रहा। ऐसी स्थिति में किसानों की लढाई कौन लढेगा?

यह लढाई अब संवेदनशील किसानपुत्रों और पुत्रीयों को लडनी पडेगी। किसान परिवार में जन्म हुआ इसलिए अनेक दाहक अनुभव झेलने पडे, ऐसे लडके-लडकियोंने खेती छोड कर शहर का रास्ता पकडा। वहाँ भी उनका संघर्ष शुरु है। 'भारत' और 'इंडिया' इन दोनों व्यवस्थाओं का उन्हें अनुभव है। यह पढे लिखे लडके-लडकियाँ कानून समझ सकते हैं। किसानों की संतान ही उनकी अंतिम आशा है।

किसानपुत्र अलग अलग व्यवसायों में है। उनकी अलग अलग प्रकार की क्षमता है। सभी की पीठ पर किसान परिवार के दाहक अनुभव का निशान है। वे गांव की मिट्टी से जुडे है। मन में आग है। वे अलग अलग क्षेत्र में, व्यवसाय में होने पर भी एक दूसरे के लिए सहाय्यक एवं पूरक सिद्ध होंगे।

राजनीतिक लोग जिन शहरी भागों में आते जाते है, वहीं किसानपुत्र पहुँचे हैं। वे राज्यकर्तांओं का हाथ पकड कर रोक सकते हैं। शहरों में किसानपुत्र महत्वपूर्ण राजकीय शक्ति बने है। उन्होंने तय किया तो वे राज्यकर्तांओं को नीति बदलवाने के लिए बाध्य कर सकते हैं। किसान विरोधी कानून खारिज करवा सकते हैं।

किसानपुत्र आंदोलन यह संगठन नहीं है। एक आंदोलन है। किसान विरोधी कानूनों पर प्रहार करने के लिए वह शुरु किया गया है। इस आंदोलन में शरिक होनेवाली प्रत्येक व्यक्ति इस आंदोलन का सैनिक है। इस आंदोलन का पहला कार्यक्रम तीन वर्षों का है। प्रचार, आत्मक्लेश और संघर्ष. यह तीन सिढियाँ है।

किसानों की बिकट अवस्था देखकर आप अस्वस्थ होते होंगे तथा किसान विरोधी कानूनों को समाप्त करने के लिए आप सहमत होंगे तो किसानपुत्र आंदोलन में शरीक हो चुके हो। हम मिलकर यह काम करेंगे।

किसानपुत्र आंदोलन का किसीभी राजनैतिक दल से कोई लेना देना नही हैं. अलबत्ता किसान विरोधी कानून समाप्त करने के लिये किये जा रहे आंदोलन को मुखर और प्रखर बनाने के लिये किसानपुत्र आंदोलन जरूरत पडने पर राजनितिक भूमिका ले सकता है.

(३४) अब तक किसानपुत्र आंदोलन ने क्या किया है?

किसानपुत्र आंदोलन संगठन नहीं है इसलिए अन्य संगठनों जैसी रिपोर्ट नहीं है। लेकिन जिन बातों की मिडियाने दर्ज किया हैं ऐसी मुख्य बातें बताई जा सकती है।

६ मार्च २०१५ को आंबाजोगाई (जि.बीड, महाराष्ट्र) में किसानपुत्रों का भव्य सम्मेलन हुआ। वहाँ से काम की शुरुवात हुई। आरंभ में कानून भी किसान विरोधी हो सकते हैं, इसपर अनेक लोगों का विश्वास नहीं था। प्रथम वर्ष में महाराष्ट्र में अलग अलग जगह जा कर लोगों को बताया कि सिलिंग, आवश्यक वस्तु तथा भूमि अधिग्रहण यह किसान विरोधी कानून हैं। इसके लिए औरंगाबाद, लातूर, पुणे, अमरावती, वरुड, आदि अनेक जगहों पर किसान विरोधी कानून परिषदों का आयोजन किया गया। उनमें ॲड. सुभाष खंडागळे (पुसद), ॲड. अनिल किलोर (नागपुर), ॲड. महेश भोसले (औरंगाबाद), ॲड. दिनेश शर्मा (पुलगाव-वर्धा) इन वकील मित्रों ने कानूनों की जानकारी देने की बडी जिम्मेवारी निभाई।

हमने २२ नवंबर २०१६ को पूना में किसानपुत्रों का सम्मेलन किया। उसे बहुत ज्यादा प्रतिसाद तो नहीं मिला लेकिन जिन्होंने सहभाग लिया उन्होंने आंदोलन की जिम्मेदारी अपने सिर पर ली। वहाँ किसानपुत्रों की एक समन्वय समिति घोषित की गई। उसमें ३५ लोगों का समावेश था।

१९ मार्च २०१७ को किसानपुत्रों ने एक दिन का उपवास कर किसानों की आत्महत्याएँ रोकने का कार्य करने का संकल्प लिया। १९ मार्च १९८६ को चिल-गव्हाण (जिला यवतमाल) गांव के साहेबराव करपे ने दत्तपूर (पवनार) जाकर संपूर्ण परिवार के साथ आत्महत्या की थी। एक कमरे से छह लाशें निकाली गयीं थी। स्वयं साहेबराव करपे, उनकी पत्नी मालती और चार बच्चे। इस घटनाने सारे देश को हिला डाला था। इस घटना का स्मरण कर लाखों किसानपुत्रोंने उस दिन उपवास किया था। इस उपवास ने शहरों में गये किसानपुत्रों को अपनी जिम्मेदारी का एहसास दिलाया। २०१८ को भी १९ मार्च को अनशन हुवा। देश के किसानपुत्रों के साथ विदेशों मे रहनेवाले किसानपुत्रोंने भी अनशन किया।

१९ मार्च का अनशन अन्य अनशनों जैसा नही है। यह अनशन किसी मांग को ले कर नहीं किया जाता। इस के उद्दश्य बडे स्पष्ट रूप से बताये गये हैं। १) साहेबराव करपे का परिवार एवं आत्महत्या करनेवाले सभी किसानों को श्रद्धांजली अर्पण करना, २) किसानों के प्रति सहवेदना व्यक्त करना, ३) सर्जकों के प्रति अपनी निष्ठा प्रखर करना, ४) जिन नितीयों के कारण किसानों को आत्महत्या करनी पड रही है उन नितीयों का निषेध करना, ५) किसानों के पांवों मे बंधी कानून की बेडीयों को तोडने का संकल्प करना। यह अनशन सामुहिक किया जा सकता है लेकिन यदी संभव न हो तो वैयक्तिक उपवास किया जा सकता है.

ॲड.सुभाष खंडागळे लिखित 'शेतकऱ्यांच्या गळफास ठरलेल्या घटनादुरुस्त्या' (किसानों के गले का फंदा बने संविधान संशोधन) इस मराठी पुस्तिका की जनवरी और जून २०१६ में दो आवृत्तियों प्रकाशित कर संपूर्ण महाराष्ट्र में उनको वितरित किया गया।

२०१८ में अमर हबीब द्वारा लिखीत 'शेतकरीविरोधी कायदे का रद्द करावे?' इस मराठी प्रश्नोत्तर पुस्तिको की दो आवृत्तीयां प्रकाशित की गयीं। तथा इसी पुस्तिका के हिन्दी और इंग्लिश अनुवाद भी प्रकाशित किये गये।

किसानपुत्र आंदोलन की ओर से देश के सभी राजनितिक दलों के नेताओं को ई-मेल द्वारा एक निवेदन भेजा गया। उसमें ये कानून तुरंत खारिज करने की मांग की गई।

किसानपुत्र आंदोलन विचारों की एक दिशा है। सर्जकों की स्वातंत्रता उसकी नींव है। इसलिए इस विषय की जानकारी देने के लिए महानगरों में शिबिरों का आयोजन करना शुरु किया गया है। १२ और १३ अगस्त २०१७ को जुई नगर, मुंबई में, ६-७ जनवरी १८ को जनमंच द्वारा नागपूर में, १०-११ मार्च १८ को आळंदी (पुना) में शिबिर हुए और लगातार शिबीरों का सिलसिला जारी है।

'किसान विरोधी कानून खारिज करो' इस आशय की पोस्ट सोशल मिडिया पर प्रत्येक सोमवार को डाली जाती है।

किसान विरोधी कानूनों को हटाने के लिये और अधिक व्यापक तथा दमदार प्रयत्नों की आवश्यकता है। कोशिश जारी है।

(३५) किसानपुत्र आंदोलन में सहभागी होने के लिए क्या करना पडेगा?

किसानपुत्र आंदोलन संगठन नहीं है इसलिए सदस्यता की अर्जी, शुल्क आदि कुछ नहीं है। इस आंदोलन में सहभागी होना सरल तथा आसान है। किसान विरोधी कानूनों को खत्म करने के लिए जो कर सकते हो, कीजिए। शुरुआत करनेपर माना जायेगा कि आप इस आंदोलन में शामिल हैं। चाहे तो अपना इरादा पक्का करने के लिए आखरी पृष्ठ पर दी हुई शपथ ग्रहण कर सकते हो।

१९ मार्च को उपवास -

जबतक किसानों की आत्महत्याएँ शुरु रहेंगी तबतक १९ मार्च को (साहेबराव करपे का स्मृति दिन) उपवास रखने का हमने तय किया है। सार्वजनिक स्थान पर बैठकर ही यह उपवास किया जाये, आवश्यक नहीं। अपना काम करते हुए भी उपवास रख सकते हो। चाहे तो इसे सोशल मिडीया द्वारा प्रसारित कीजिए। यह उपवास अपनी निष्ठा को पुख्ता करने के लिए है।

कोष-

किसानपुत्र आंदोलन कोष इकठ्ठा नहीं करता है। किसानपुत्रों की जेब ही आंदोलन की बँक है। आप देना चाहते हो तो रकम घोषित कीजिए। जब आवश्यकता होगी तब आपको बताया जायेगा। आप को स्वयं खर्च करना पडेगा।

याचिका के लिये अर्थसहाय्य-

किसानपुत्र मकरंद डोईजड ने सर्वोच्च न्यायालय में ३१ बी को चॅलेंज किया है। इस याचिका का यदी आप समर्थन करते हो तो आप रू.१००० (एक हजार रुपये) का अर्थ सहाय्य कर सकते हैं। यह रकम वह कोर्ट के काम में लगायेंगे और जो पैसे भेजेगा उसे खर्चे की पुरी हिसाब वह देंगे।

सत्याग्रही नाम दर्ज करना-

Kisanputra.in (किसानपुत्र डॉट इन) यह किसानपुत्र आंदोलन की वेब साईट है। जिसे पूना के किसानपुत्र मित्रों ने बनायी है। जिनकी एक कदम आगे बढकर सत्याग्रह करने की तैयारी है, उन्हें वेब साईट पर जाकर सत्याग्रही का फॉर्म भरना होगा।

सोशल मीडिया-

'किसानपुत्र आंदोलन' (देवनागरी अक्षरों में) फेसबुक पेज है। उसी प्रकार *Kisanputra andolan* (इंग्लिश अक्षरों में) ग्रुप भी है। उस पर अपडेट उपलब्ध किये जाते है। अनेक व्हाटस्अप ग्रुप हैं। उन्हे जॉईन कीजिए। 'किसान विरोधी कानून समाप्त करो' इस प्रकार की पोस्ट हर सोमवार डाली जाती है। आपभी पोस्ट करना शुरु करें।

शिबिर, परिषद, सम्मेलन, सभा-

किसान विरोधी कानून खारिज हो इसके लिए जनमत तैयार करने के लिए शिबिर, परिषद, संमेलन, सभा आदि में शामिल हो सकते हैं। आप आयोजित भी कर सकते हैं।

संपर्क-

अमर हबीब, अंबर, हाउसिंग सोसायटी, आंबाजोगाई- ४३१५१७ महाराष्ट्र
8411909909
habib.amar@gmail.com

शपथ

मैं शपथ लेता हूँ कि,
किसान, महिला एवं अन्य सर्जकों का
लाचारी तथा कुंठा का जीना समाप्त कर
वे देश के अन्य नागरिकों की तरह
सम्मान, सुख एवं स्वतंत्रता से
जी सके
इसलिए
मैं पूरी क्षमता से प्रयत्न करुँगा।
इसके लिए
किसानों के गले का फंदा बने,
सिलिंग अधिनियम
आवश्यक वस्तु अधिनियम
भूमि अधिग्रहण अधिनियम
तथा अन्य किसान विरोधी कानून
खारिज करने के लिए
मैं सतत कार्य करुँगा।
इस कार्य में,
जात, धर्म, पंथ, दल, भाषा, प्रदेश, लिंग
ऐसे किसी भी भेदों की
रुकावट आने नहीं दूँगा।